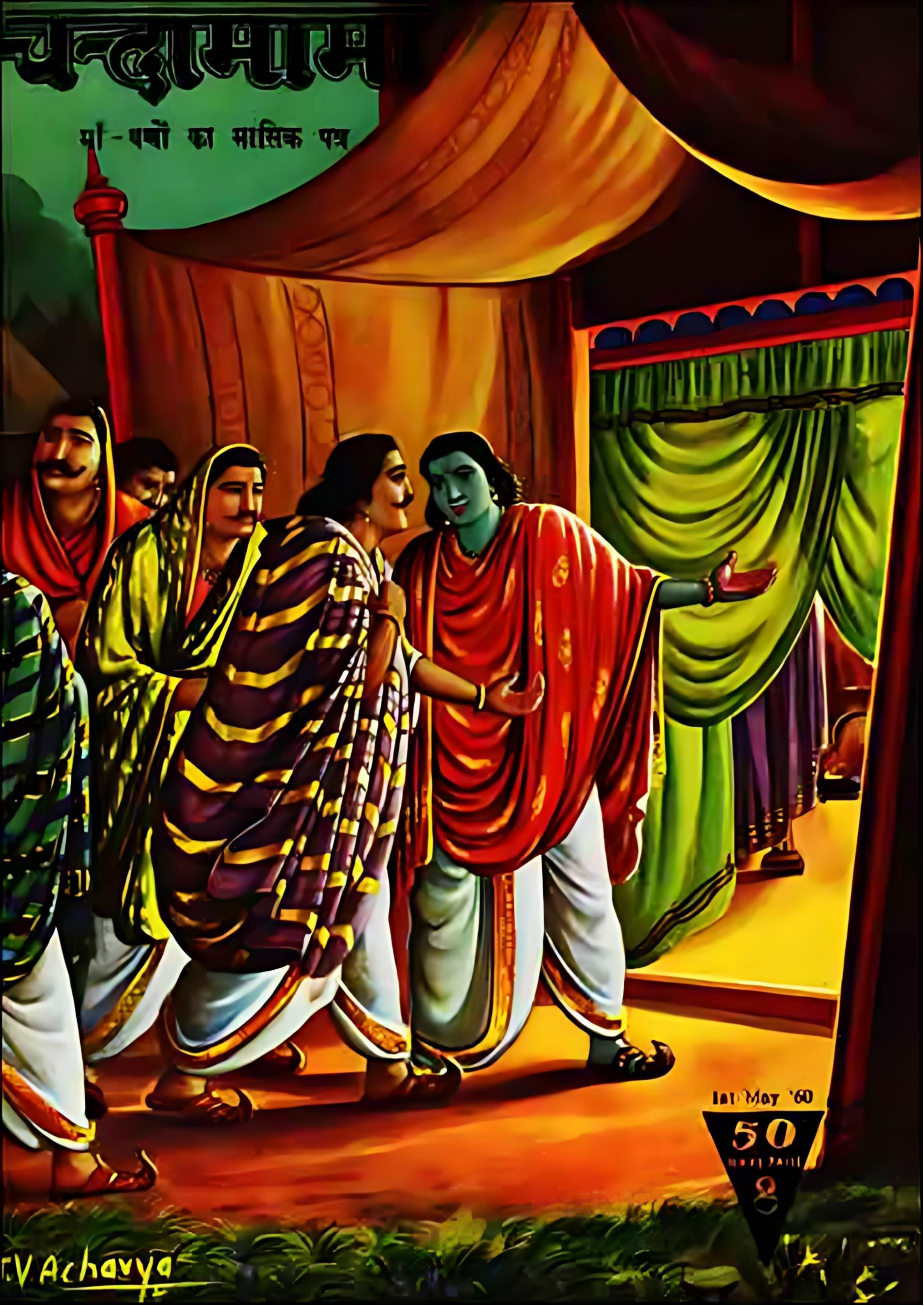

चन्दामामा
मा-बच्चों का मासिक पत्र
1st May '60
50
T.V. Acharya



आठवें दिन रात को दुर्योधन, दुश्शासन, शकुनि, और कर्ण की एक सभा हुई। दुर्योधन ने यों कहा- "हमारे साथ भीष्म हैं, द्रोण, कृपा हैं, फिर भी हम पाण्डवों को हरा नहीं पा रहे हैं, क्या कारण है? और पाण्डव खूब बढ़ चढ़कर युद्ध कर रहे हैं। हमारी सेनायें हर रोज नष्ट होती जा रही हैं। मुझे तो ऐसा लगता है, जैसे पाण्डव और देवता, एक साथ मेरे जीवन का परिहास कर रहे हो। मुझे नहीं मालूम इस युद्ध में मेरी विजय कैसे होगी।"

यह सुन कर्ण ने कहा-"महाराज! आप चिन्ता न कीजिये। भीष्म से कहिये कि वह लड़ना छोड़ दे। मैं और मेरे बन्धु उन पाण्डवों को एक क्षण में यमपुरी पहुँचा देंगे। भीष्म, पाण्डवों को पसन्द करता है, यही नहीं, उसको बड़ा घमण्ड है। वह गुसैल भी है। इसलिए वह कभी भी पाण्डवों को नहीं मार सकता। अगर उसने अभी अपने शस्त्र छोड़ दिये तो तुरन्त में मैदान में उतरूंगा और अपना पराक्रम दिखाऊँगा।"

यह सुन दुर्योधन को सन्तोष हुआ। दुश्शासन से उसने कहा कि वह अगले दिन के लिए सेना तैयार करे। "कर्ण, मैं अभी भीष्म के डेरे पर जा रहा हूँ। जैसा तुमने कहा है, मैं उनको मनाऊँगा कि वे शस्त्र छोड़ दें।"

दुर्योधन ने अच्छे कपड़े पहने। आभूषण वगैरह भी धारण किये। तैयार हो कर, कुछ आदमियों को लेकर वह भीष्म के पास गया। भीष्म ने स्वागत करके उससे बैठने के लिए कहा। "बाबा, पहले ही तुमने वचन दे रखा है कि कैकेय,

पाञ्चाल और सोमक आदि को खतम कर दोगे। अपना वचन क्यों नहीं पूरा करते? अगर तुम्हें पाण्डवों से प्रेम हो, अथवा मुझ पर कोप हो तो युद्ध का भार छोड़कर कर्ण को दे दो। वह पाण्डव और उनके बन्धु मित्रों को मार देगा।"

यह सुनते ही भीष्म को बड़ा गुस्सा आया। उसकी आँखें लाल हो गई। उसने जैसे तैसे कोप छुपाकर कहा-"दुर्योधन, क्यों तुम मुझ से इस तरह बातें कर रहे हो, जैसे बाणों से मार रहे हो। तुम्हारे लिए ही तो मैं शत्रु सेना का दहन कर रहा हूँ? क्या तुम नहीं जानते कि अर्जुन किस प्रकार का बीर है! जब तुम्हें गन्धर्व पकड़ ले गये थे, तब उसने अकेले आकर तुम्हें छुड़वाया था। क्या तब तुम्हारे सारे भाई भाग नहीं गये थे? क्या तब यह कर्ण कुछ कर सका? फिर इसी अर्जुन ने ही तो विराट नगर के पास हम सबको हराया था। वह अद्वितीय वीर है, यह दिखाने के लिए और उदाहरणों की क्या आवश्यकता है? मैं सिवाय शिखण्डी के सब सोमक पाँचालों को या तो मार दूँगा, नहीं तो उनके



हाथ मारा जाऊँगा। कल जिस तरह मैं लड़ूँगा वह स्वयं तुम ही देख लेना।" उसने समझाकर कहा।

यह सुनकर सन्तुष्ट हो दुर्योधन अपने आदमियों को लेकर अपने शिविर पहुँचा।

प्रातःकाल होते ही कौरव सेनायें, सर्वतोभद्र नामक व्यूह में व्यवस्थित की गई।

नौवें दिन युद्ध में असाधारण वीरता जिन्होंने दिखाई, उनमें अभिमन्यु अग्रणी था। उस दिन द्रोण, कृपा, अश्वत्थामा सैन्धव आदि भी उसका मुकाबला न कर



सके। यह देख दुर्योधन ने अलम्बस नाम के राक्षस को अभिमन्यु का सामना करने के लिए भेजा। दोनों में भयङ्कर युद्ध हुआ। अलम्बस ने घायल होकर जादू से सर्वत्र अन्धकार ला दिया। उस अन्धकार को समाप्त करने के लिए अभिमन्यु ने सूर्यास्त्र छोड़ा। आखिर अलम्बस हारकर भाग गया। अभिमन्यु मत्त हाथी की तरह कौरव सेना में घुसता रहा।

जल्दी ही कौरव योद्धाओं ने अभिमन्यु को चारों ओर से घेर लिया। उसकी रक्षा करने के लिए अर्जुन आया।

फिर दोनों तरफ के योद्धाओं में तरह तरह के द्वन्द्व युद्ध हुए। उस दिन शत्रुओं को मारने में अर्जुन भी अभिमन्यु के पीछे न रहा।

परन्तु भीष्म ने ही उस दिन सब से अधिक शत्रु संहार किया। पाण्डव जिस प्रकार कौरव सेना का नाश कर रहे थे, उस प्रकार भीष्म ने भी पाण्डव सेना का नाश किया। जब उसका मुकाबला करके पाण्डव सेना भागी जा रही थी, तब उनको कोई भी न रोक सका। वह इस वीरता के साथ युद्ध कर रहा था कि सूर्य अस्त हो गया और सूर्य के साथ पाण्डवों का मानों धीरज भी अस्त हो गया। कौरवों के आनन्द की सीमा न थी।

आगे युद्ध कैसे चलाना था, इस विषय में पाण्डवों में विचार-विमर्ष हुआ। युधिष्ठिर ने कृष्ण से कहा- "जब भीष्म उनकी तरफ था, तो हमारे लिए युद्ध में उतरना कितनी मूर्खता की बात थी। वह हमें जीवित न छोड़ेगा। जीवित रहकर किसी धर्म का भी पालन किया जा सकता है। मरकर हम क्या करेंगे? मैं लड़ना छोड़ दूँगा। तुम्हारी सलाह क्या है?"

तब कृष्ण ने कहा-"भीष्म यदि मर गया, तो निश्चय ही विजय तुम्हारी होगी। अगर अर्जुन भीष्म को न मारना चाहे तो मुझे योद्धा नियुक्त करो। तुम्हारी आज्ञा पर में अस्त्र पकडूँगा और भीष्म को एक क्षण में मारकर मैं तुमको विजय दिलवाऊँगा।"

"कृष्ण! हमने कहा था कि तुम अस्त्र नहीं पकड़ोगे। मैं नहीं चाहता कि संसार कहे कि तुमने वह किया जो तुमने करने का वादा नहीं किया था। युद्ध के अतिरिक्त यदि हमें और कोई सहायता मिले, वही हमारे लिये काफी है। शुरू में भीष्म ने इससे कहा था कि वह हमारी मदद करेगा। यह हमारा शुभाकांक्षी है। इसलिए हम उसके पास जाकर पूछेंगे कि वह कैसे मर सकता है। कृष्ण, उसने हमारा पिता की तरह पालन पोषण किया है। अब हम उसे मारने की ही सोच रहे हैं। यह क्षत्रिय कुल में जन्म भी किस काम है?" युधिष्ठिर ने कहा।

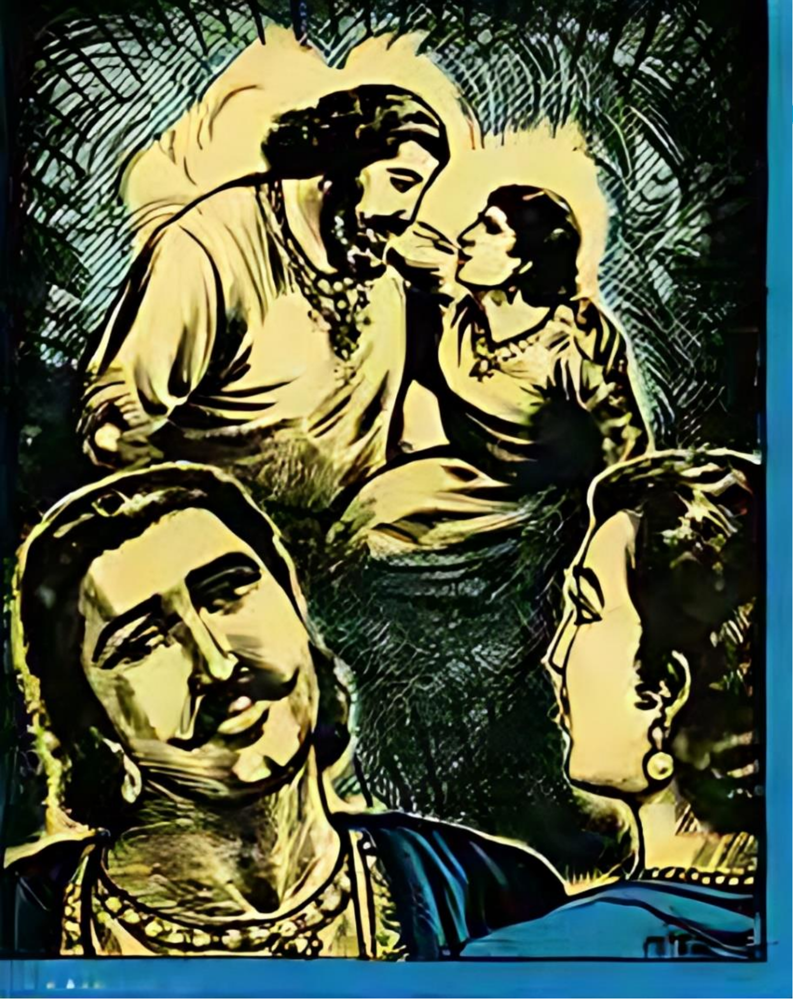
कृष्ण ने युधिष्ठिर के सुझाव का समर्थन किया। उसने कहा कि भीष्म से ही पूछा जाये कि वह कैसे मरेगा। पाँचों पाण्डवों और कृष्ण ने अस्त्र और कवच छोड़कर, अपने



मुकट भी उतारकर भीष्म के डेरे में जाकर भक्तिपूर्वक नमस्कार किया।

भीष्म ने आदरपूर्वक उनको बिठाया। उनका कुशल क्षेम पूछा। उनसे पूछा कि वे किस काम पर आये थे।

युधिष्ठिर ने उनसे कहा-"बाबा, रोज लोग मारे तो जा रहे हैं। पर विजय के चिन्ह कहीं नहीं दिखाई देते। हम यह सोच नहीं पा रहे हैं कि तुम को युद्ध में किस तरह जीता जाय। अगर कोई ऐसा उपाय हो जिससे हम तुम को जीत सकें, हमें बताओ।"



भीष्म ने कहा-"पाण्डव, जबतक मैं जीवित हूँ तुम्हें विजय कदापि नहीं मिल सकती। यदि तुम जीतना चाहते हो, तो मुझे जल्दी गिरा दो। इस काम के लिए तुम्हारी ओर से शिखण्डी लड़ ही रहा है। वह महारथ है। महावीर है। परन्तु चूँकि वह पहले स्त्री था, और फिर बाद में पुरुष हो गया था इसलिए मैं उससे युद्ध नहीं करूँगा। उसको सामने करके अर्जुन मुझ से यदि लड़ा, तो वह मुझे आसानी से मार सकेगा।" पाण्डव इस सलाह पर पितामह को नमस्कार करके अपने शिविर में चले गये।

यह देख अर्जुन बड़ा दुखी हुआ। उसने कृष्ण से कहा-"भीष्म मुझे धूल में खेलता न देख पाता था। जब एक दिन उसकी गोदी में बैठकर मैंने कहा-'पिता जी' तो उसने कहा-'बेटा में तुम्हारा पिता नहीं हूँ। बाबा हूँ।' अब मैं उसको कैसे मारूँ? भले ही वह हम सब को मार दे। यह कैसे हो सकता है?"

कृष्ण ने अर्जुन को समझाया। उससे कहा कि भीष्म को मारकर वह अपनी प्रतिज्ञा पूरी करे। उसने कहा कि शत्रुको मारना क्षत्रिय धर्म था।

दसवें दिन प्रातःकाल हुआ। उस दिन शिखण्डी को सामने करके अपनी सेना लेकर पाण्डव युद्ध स्थल में गये। कौरव सेना के आगे भीष्म खड़ा था।

युद्ध आरम्भ होते ही पाण्डव कौरव सेना का नाश करने लगे। यह देख भीष्म गरमा गया और पाण्डव सेना को समाप्त करने लगा। उसने दुर्योधन से कहा-"मैंने नियम बना लिया है कि दस हजार रथियों को बिना मारे युद्ध से विश्राम न लूँगा। उस नियम के अनुसार आज मैं

दस हजार रथियों को मार कर रहूँगा। घबराओ मत।"

उस दिन पाण्डवोंने भी निश्चय कर रखा था कि वे कुछ भी हो, भीष्म को मार कर ही रहेंगे। उन्होंने उस पर आक्रमण किया। उसी तरह जी जान से कौरव भी भीष्म की रक्षा कर रहे थे। वे भी प्राण हाथ में रखकर उस पर आक्रमण करनेवाले शत्रुओं का मुकाबला करने लगे।



अर्जुन ने शिखण्डी से कहा-"तुम से भीष्म युद्ध नहीं करेगा। आज तुम्हें उसे अवश्य मारना होगा। अगर सब कौरवों ने मिलकर भी तुम पर हमला किया, तो मैं उनका सामना करूँगा। उनसे तुम्हें कोई खतरा नहीं है। जैसे भी हो आज तुम भीष्म को मार कर अमर कीर्ति पाओ।" उस दिन अर्जुन, शिखण्डी के पीछे ही था। पाण्डव पक्ष के योद्धा भीष्म को मारने के लिये आगे बढ़े। कौरव योद्धा भी उसकी रक्षा में नियत थे। दोनों में भयङ्कर युद्ध हुआ। उस दिन दुश्शासन विशेष रूप से भीष्म की रक्षा कर रहा था।

उसने बड़ा पराक्रम दिखाया। न मालूम क्यों द्रोण को सन्देह हुआ कि भीष्म उस दिन मैदान में गिर जायेगा। उसने अपने लड़के, अश्वत्थामा से कहा-"बेटा! कोई भी पिता अपने लड़के की मौत नहीं चाहता। परन्तु आज मेरी आज्ञा है कि तुम बिना अपने प्राणों की परवाह किये भीष्म की रक्षा करो।"

जब उसकी तरफ के योद्धा पाण्डवों से लड़ रहे थे, तब भीष्म जन संहार करता जाता था। उसे अपने प्राणों का परवाह नहीं थी। उसने अपने निश्चय के अनुसार दस हजार शत्रुओं को उस दिन

मार ही दिया। मृत योद्धाओं में किरात का छोटा भाई शतसीर भी था।

वह जब अकेला, दोनों सेनाओं के बीच खड़ा खड़ा नर संहार कर रहा था, तब शिखण्डी के रथ के पीछे कृष्ण अर्जुन का रथ हाँकता, उसके पास आया।

भीष्म ने शिखण्डी से युद्ध नहीं किया। पर उसने उसके घोड़े और सारथी को मारा। अर्जुन ने शिखण्डी के पीछे से भीष्म के हाथ का बाण तोड़ दिया। वे जितने बाण उठाता उतने ही बाणों को अर्जुन तोड़ देता। इस बीच शिखण्डी भीष्म के शरीर पर बाण मारता जाता था। पर उनको उनका दर्द न था। पर जब कभी अर्जुन का बाण लगता तो भीष्म कराह कर कह उठता-"ये बाण शिखण्डी के नहीं हैं।"

"तुम सब भीष्म पर हमला करो; तुम्हें कोई डर नहीं है।" युधिष्ठिर ने अपने पक्ष के योद्धाओं को प्रोत्साहित किया।

दो घड़ी भीष्म के चारों ओर भयङ्कर युद्ध हुआ। दुर्योधन आदि भी देख रहे थे कि भीष्म का सिर एक ओर झुका और वह रथ से नीचे गिर गया। उसके शरीर पर इतने वाण थे कि वह पृथ्वी को न छू सका। उसके शरीर पर खाली जगह न थी। अङ्ग अङ्ग पर ढेर से वाण थे। वे ही उस के लिए बाण शैय्या बने।

यह जानते ही कि मीष्म गिर गया है, सेना में हाहाकार मच गया। वह दक्षिणायण का समय था। बड़े लोग उत्तरायण में ही प्राण छोड़ते हैं। भीष्म तो ऐसा था कि उसको अपने प्राणों पर अधिकार था। इसलिए उसने उत्तरायण के आने तक जीवित रहने का सङ्कल्प किया।





[४]

[लोगों ने आकर बताया कि उग्राक्ष उनके पशु और मनुष्यों को उठाकर के जा रहा था। चित्रसेन उग्राक्ष के किले में गया। उग्राक्ष ने बताया कि राज्य में पशुओं और मनुष्यों को उठाकर ले जानेवाले अग्नि द्वीप से आनेवाले भयङ्कर आदमी थे। उग्राक्ष ने वचन दिया कि वह उन्हे दिखायेगा। बाद में...]

फिर उसने चित्रसेन और उसके साथ आये हुए लोगों को अपने किले में रखे बहुमूल्य रत्नों और सोना चान्दी को दिखाया। संसार के शुरू से और तब तक जिन-जिन शस्त्रों का राक्षसों ने उपयोग किया था, जिन-बिन शिरस्त्राणों को उन्होंने पहना था, वे सब वहाँ थे। चित्रसेन को उन्हें देख बड़ा आश्चर्य हुआ। पर सब से अधिक आश्चर्य हुआ उसे किले में रखी धनराशि को देखकर। राक्षसों को धन से क्या काम?

"उग्राक्ष! तुम राक्षसों को इस धन से क्या काम?" चित्रसेन ने पूछा।

यह प्रश्न सुनते ही उग्राक्ष जोर से हँसा। "जब कभी हमारे राक्षस सभ्य होकर तुम्हारी तरह कृषि, व्यापार आदि करने लगेंगे, तब वे इनका उपयोग कर सकेंगे। यही नही, मैंने यह धन इसलिए भी रखा है, क्योंकि

अट्ठारह वर्ष बाद एक मुख्य घटना होने जा रही है। तब धन की आवश्यकता होगी।" अट्ठारह वर्ष के बाद मुख्य घटना का ज़िक्र करते ही चित्रसेन ने सोचा कि जरा दाल कुछ में काला है। उसे सन्देह हुआ। पर वह न चाहता था कि राक्षस उसके सन्देह को ताड़ सके। अगर राक्षस यह सोच रहा है कि मैं नादान हूँ और अट्ठारह साल बाद सचमुच में अपने लड़के को दे दूँगा तो उसे सोचने दो।

किले की आश्चर्यजनक चीजें देखते-देखते सूर्यास्त हो गया। उग्राक्ष ने अपने अतिथि और उसके अनुयायियों को एक बड़ी दावत दी।

दावत हो रही थी कि उग्राक्ष के एक सेवक ने उसके पास आकर कहा- "हुजूर, अग्निद्वीप से जिस भयङ्कर पक्षी पर लोग आते हैं वह कुम्भिकुप्प प्रान्त में दिखाई दिया है। वहाँ के पहरेदारों ने आग जलाकर हमारे पास अभी अभी यह सन्देश भेजा है।"

सेवक की बात सुनते ही उग्राक्ष घबरा सा गया। "चित्रसेन, जल्दी खाना खाकर हम लोगों का जाना अच्छा है। तुम्हारे



राज्य में जो लोगों को उठा ले जा रहे हैं, उन क्रूरों को मैं दिखाऊँगा।"

सब जल्दी-जल्दी भोजन करके उग्राक्ष के साथ चले गये। उग्राक्ष अपने साथ चित्रसेन और कुछ सशस्त्र सैनिकों को लेकर निकला। बाकी अनुचरों को उसने एक दिशा में भेज दिया।

उग्राक्ष और चित्रसेन आदि किला छोड़कर पूर्व की ओर कुछ दूर जङ्गल में गये थे कि किले की तरफ से पंखों की भयङ्कर आवाज और होहल्ला सुनाई दिया। सबने पेड़ों के बीच रुककर किले की ओर देखा। किले पर पंख फैलाये कुछ विचित्र पक्षी उड़ रहे थे। किले के पहरेदार बड़ी बड़ी मशालें जलाकर शोर करके उनको नीचे नहीं उतरने दे रहे थे। उनको डरा रहे थे।

"उग्राक्ष! लगता है ये भयङ्कर लोग उत्पात करने पर तुले हुए हैं। क्या वे तुम्हारे किले पर उतरकर उसपर आक्रमण करने की सोच रहे हैं? आखिर बात क्या है?" चित्रसेन ने पूछा।

अग्निद्वीप के लोगों ने पहले भी इस तरह के प्रयत्न दो तीन बार किये थे।





परन्तु मेरे सेवकों ने बड़ी बड़ी मशाले जलाकर, भाले उपयोग करके उन भयङ्कर पक्षियों पर सवारी करनेवालों में से एक को गिरा दिया था। जब उसे चक्की में बाँधकर दो तीन बार चक्कर कटवाया तो उसने बता दिया कि वह कहाँ से आया था। इससे पहले कि हम उससे और कुछ जान पाते वह मर गया। अब उसके अनुचर मुझसे बदला लेने की कोशिश कर रहे हैं। पर मुझे विश्वास नहीं है कि वे साहस करके किले में उतरेंगे।" उग्राक्ष ने कहा।

उग्राक्ष अभी बात कर ही रहा था कि आसपास के पेड़ इस तरह हिले, जैसे कोई तूफ़ान आया हो। तुरन्त भयङ्कर ध्वनि के साथ दो पक्षी कुछ दूरी पर उतरे। उनकी पीठ पर से शेर का चमड़ा पहने चार आदमी उतरे।

तुरन्त उग्राक्ष, चित्रसेन आदि को पेड़ों की झुरमुट में एक ऊँची जगह पर ले गया। विचित्र पक्षियों पर से उतरे हुये व्यक्तियों ने पेट के बल लेटकर पेड़ों के आसपास ध्यान से देखा, फिर वे उठे। आपस में सलाह मशवरा करके वे आगे बढ़े। उनके पीछे पंख चलाते वे पक्षी भी गये।

सच पूछा जाये तो उन पंखवाले जन्तुओं को पक्षी नहीं कहा जा सकता था। उनकी नाक करीब करीब तीन फीट बड़ी थी। उनके मुख में शेर के दान्तों की तरह दान्त थे। शरीर पर कहीं भी पंख न थे। वे पक्षियों की तरह दो पैरों पर आगे झुककर चलते थे। उनकी ऊँचाई सात आठ फीट थी।

"खतरा उन शेर के चमड़े पहने हुए आदमियों से नहीं है। परन्तु इन भयङ्कर पक्षियों से है। वे उनके अङ्गरक्षक हैं और

वाहन भी हैं। यदि कोई उन क्रूर व्यक्तियों का मुकाबला करने आता है तो पहले ये पक्षी झपटते हैं। तरह तरह की सीटियाँ बजाकर शेर के चमड़े पहने ये लोग इनको अपने शत्रुओं पर उकसाते हैं। इन पक्षियों ने मेरे सेवकों की बोटी-बोटी काट दी है, अपनी चोञ्चों से। बहुत निर्दय और भयङ्कर हैं ये।" उग्राक्ष ने कहा।

उग्राक्ष यह कह रहा था और पक्षियों पर से उतरे लोग, धीमे धीमे सीटियाँ बजाते पेड़ों की ओर चलने लगे। दोनों पक्षी एक साथ चोञ्च उठाकर, झट पंख फड़फड़ाते उनके पीछे चले।

"देखो, पहाड़ की तराई के पास उस गाँव की ओर जा रहे हैं ये।" उग्राक्ष ने कहा।

"तो क्या हम हाथ पर हाथ रखे बैठे रहेंगे?" चित्रसेन ने गुस्से में उग्राक्ष से पूछा।

"और क्या किया जा सकता है? जब तक उनके साथ ये भयङ्कर पक्षी हैं, हम कुछ भी नहीं कर सकते। अगर ये द्वीपवाले मुझे अकेले मिलें तो मैं उनको अपनी छोटी अंगुली से चूरा चूरा कर दूँ।" उग्राक्ष ने कहा।



जहाँ उग्राक्ष और चित्रसेन खड़े थे, उस पेड़ पर से उल्लू जोर से चिल्लाया। उसके शोर से कान फूटते से लाते थे। उसका चिल्लाना सुनते ही शेर का चमड़ा पहने हुए लोग पीछे हटे। उनके हाथ के भाले अन्धेरे में चम चमा रहे थे। भयङ्कर पक्षी भी रुके। जोर से चोञ्च खोलकर उन्होंने भी विचित्र शोर किया।

"लगता है इन्होंने मालूम कर लिया है कि यह क्या है।" उग्राक्ष ने कहा। उसने तुरन्त अपने सेवकों को बुलाया। उसने



धीमे से कुछ कहा। वे दो टुकड़ियों में अलग अलग चले गये। तुरन्त भयङ्कर पक्षी चोञ्च खोलकर, उग्राक्ष और चित्रसेन की ओर भागे भागे आये। उनके पीछे शेर का चमड़ा पहने लोग, भाले घुमाते आगे बढ़े आ रहे थे।

चित्रसेन ने तलवार खींची। उग्राक्ष ने जोर से गर्जन किया और हाथ की पत्थर की गदा लेकर झट आगे बढ़ा। जब उसने पत्थर की गदा एक पक्षी के सिर पर जोर से मारी, तो वह एक तरफ गिर गया। परन्तु दूसरा पक्षी उसके कन्धे को पैरों से मारता, चोञ्च उसके सिरपर लगातार मारने लगा।

उसी समय उग्राक्ष के सेवक राक्षस भयङ्कर गर्जन करते पीछे से दो टुकड़ियों में आये और उन्होंने शेर के चमड़े पहने हुए लोगों पर हमला किया। यही मौका देख चित्रसेन भी तलवार लेकर आगे बढ़ा और एक शत्रु के उसने दो टुकड़े कर दिये।

उसके बाद क्रूर, निर्भय युद्ध शुरु हुआ। उग्राक्ष ने अपने घावों की परवाह न की। वह अपनी पत्थर की गदा से भयङ्कर पक्षियों को मारने लगा। वे उसकी चोट से बच बचकर एक तरफ हटते और फिर उस पर हमला करते। उनकी चोञ्च की चोट और नाखूनों के खरोंच से न केवल उग्राक्ष ही घायल हुआ परन्तु उसके सेवक भी आहत हुए।

जब चित्रसेन ने एक शत्रु को मार दिया तो वह औरों पर झपटा। वे अपने भालों से उसके बार रोकते हुए विचित्र सीटियाँ बजाते पीछे भागने लगे। क्योंकि पक्षी उनकी रक्षा कर रहे थे इसलिए चित्रसेन और उग्राक्ष के सैनिक, शत्रुओं को न घेर सके। वे अपने पंखों, नाखूनों से और चोञ्चों



से लगातार उनको मारते जाते थे और अपने मालिकों के साथ पीछे होते जाते थे। यह देख उग्राक्ष भयङ्कर रूप से गरजता पत्थर की गदा हाथ में लेकर घुमाता घुमाता आगे बढ़ा। तब तक शत्रु जो मरने से बच गये थे, पक्षियों पर चढ़ने लगे थे। ज्योंही उन्होंने सीटी बजाई तो पक्षी हवा में उड़े। उग्राक्ष ने पत्थर की गदा उन पर फेंकी। उसने इतने जोर से वह फेंकी कि झटके में वह स्वयं गिर गया। उस गदा को जो बाण की तरह ऊपर चली आ रही थी एक पक्षी ने उस पर इतने जोर से चोञ्च मारी कि वह गदा नीचे धड़ाम से जा गिरी।

उग्राक्ष खून से लथपथ पड़ा था। चित्रसेन ने उसके पास जाकर कहा-"कही ऐसा घाव तो नहीं लगा है, जिससे प्राणों का खतरा हो।"

"प्राणों का खतरा?" उग्राक्ष दर्द के कारण कराहा। "प्राणों का तो खतरा नहीं है। परन्तु शायद दस दिन पलङ्ग पर लेटना पड़ेगा। मेरे कितने सेवक मारे गये हैं?" उसने पूछा।

"दो को भयङ्कर पक्षियों ने काट डाला है। चार धावों के कारण कराह रहे हैं।" कहते कहते चित्रसेन ने राक्षसों की ओर मुड़कर पूछा-"शत्रुओं में एक ही तो मारा गया है।"

"हाँ, राजा।" उन्होंने कहा।

"हैं, डरपोक कहीं के। जब इतने सारे राक्षस वीर हैं। कहीं से आये हुए लोगों ने हमें कैसे मारा? छीः।" कहता, दर्द के कारण कराहता कराहता उग्राक्ष ने उठने की कोशिश की। इतने में उसके सेवेकों ने आकर उसकी पीठ, कन्धे पकड़ कर उसे उठाया।

(अभी है)





उदयन और वासवदत्ता का विवाह हुआ। विवाह के बाद कुछ समय विनोद विलास में, शिकार में बीत गया। इस समय अरुणी नाम के एक व्यक्ति ने वत्सराज्य का बहुत-सा भाग हड़प लिया। फिर उसने राजधानी कौशाम्बी नगर पर आक्रमण किया।

वत्सराजा को फिर उसका राज्य जीतकर देने के लिए उसके मन्त्रियों में (यौगन्धराय, रुमण्वन्त, वसन्तक) विचार-विमर्श हुआ। मगध के राजा दर्शक की एक बहन थी। यदि उसका उदयन के साथ विवाह कर दिया गया तो मगध राजा की सहायता से अरुणी को जीता जा सकेगा और वस्स राज्य का वह भाग जो उसके अधिकार में था, फिर लिया जा सकेगा।

जब तक वत्सराजा की प्रिय पत्नी वासवदत्ता है, वह कदापि अपनी बहन की शादी उससे न करेगा। दर्शक महाराजा ने साफ़ साफ़ कह दिया। इसके लिए भी मन्त्रियों ने एक नाटक खेला। लावणक के पास वत्स का राजा शिकार खेल रहा था। उस समय जाकर दोनों मन्त्री राजा से कहेंगे कि शिविर में आग लग गई थी। उसमें वासवदत्ता मर गई थी। यौगन्धराय जब उसको बचाने गया तो यह भी जलकर खाक हो गया। इस नाटक का समर्थन वासवदत्ता ने भी किया।

जब वत्सराजा शिकार से शिबिर वापस आया तो योगन्धराय ने ब्राह्मण तपस्वी का वेश धारण किया। वासवदत्ता ने भी ब्राह्मण स्त्री का वेष बदला। अपना नाम भी अवन्तिका रख लिया। दोनों मिलकर मगध की राजधानी, राजगृह की ओर गये। वे राजगृह के बाहर एक आश्रम में पहुँचे।



जब वे आश्रम पहुँचे, तो राजा की बहन आश्रम देखने आई। सैनिक "मार्ग करो, रास्तो छोड़ो" चिल्लाते-चिल्लाते भागे आये। यौगन्धराय और वासवदत्ता, दोनों ही इस तरह के व्यवहार के आदि न थे। पर यह जानकर कि उनके पीछे पद्मावती आ रही थी, दोनों बड़े खुश हुए।

आश्रम की स्त्रियों ने स्नेहपूर्वक पद्मावती का स्वागत किया। पद्मावती की दासी ने उनसे पूछा कि उनको क्या क्या चाहिए था। किसी ने कुछ नहीं माँगा। यौगन्धराय ने आगे बढ़कर कहा- "मेरी एक प्रार्थना है। यह मेरी बहन है। इसका पति कोई और देश चला गया है। मेरा निवेदन है कि राजकुमारी, मेरे वापस आने तक अपने साथ इसे रखें।" पद्मावती इसके लिए मान गई।

उस समय लावणक से एक विद्यार्थी वहाँ आया। वह रहनेवाला तो राजगृह का था, पर लावणक में वेदों का अभ्यास कर रहा था। उसने लावणक की खबरें सुनाते हुए यह भी बताया कि शिविर में वासवदत्ता और यौगन्धराय जलकर मर गये थे। उदयन जब शिकार से वापस आये तो पत्नी के जले भुने गहने छाती से लगाकर रोये। उन्होंने आग में कूदकर आत्महत्या करनी चाही। वे बेहोश हो गये।

जब यह सुनकर वासवदत्ता के आँसू निकले तो सबने सोचा कि वह बहुत सहृदय थी। जब विद्यार्थी ने कहा कि.. महाराज को फिर होश आ गया था, तो पद्मावती ने लम्बी साँस छोड़ी, यह भी व्यक्त किया कि उनको उससे प्रेम था।

यौगन्धराय पद्मावती से विदा लेकर चला गया। पद्मावती वासवदत्ता को अपने साथ ले गई। वासवदत्ता जान गई कि

पद्मावती उसके पति से प्रेम कर रही थी और उससे विवाह करना चाहती थी। जल्दी उनका विवाह भी निश्चित कर दिया। पर इसके लिए उदयन ने कोई प्रयत्न नहीं किया। वत्स का राजा जब काम पर राजगृह आया, तो दर्शक महाराजा उसका यौवन, सौन्दर्य देखकर बड़ा प्रभावित हुआ। उसने उससे अपनी बहन से शादी करने के लिए कहा। ज्यों ज्यों विवाह का समय समीप आता जाता था, वासवदत्ता के सामने अन्धकार छाता जाता था। वह सबके सामने खड़ी न रह सकी। वह कहीं एकान्त में चली गई और अपनी दुरवस्था के बारे में शोक करने लगी। पर इतने में एक दासी बहुत-से फूल लेकर उसको खोजती वहाँ आई। उससे दुल्हन के लिए माला बनाने के लिए कहा। वासवदत्ता ने माला बनाकर दे दी। उसने सोचा कि मेरा पति भी मेरा न रहा।

एक दिन उद्यान में पद्मावती वासवदत्ता और एक सहेली बैठे बातें कर रही थीं। वासवदत्ता ने यह जानने की कोशिश की कि पद्मावती को उदयन पर किस प्रकार का प्रेम था।





पद्मावती ने बाद में बताया कि उसका पति वासवदत्ता को भूल न पाया था। वह एक दिन वीणा बजा रही थी कि वह लम्बी साँस छोड़कर चुप हो गया।

"यदि यही बात है तो मैं सौभाग्यशालिनी हूँ।" वासवदत्ता ने मन ही मन सोचा।

उस समय उदयन, वसन्तक, पद्मावती को खोजते उस तरफ आये। क्योंकि उसके साथ वासवदत्ता थी, इसलिए पद्मावती न चाहती थी कि वह पति की नज़र में आये। वह अपनी सहेलियों को लेकर पास वाले घर में गई। वसन्तक उस घर में खोजने के लिए आया। परन्तु इतने में पद्मावती की सहेली ने एक शहद का छत्ता छू दिया। मक्खियों के भय से वसन्तक वापस चला गया।

फिर राजा और विदुषक बसन्तक ने बाग में बैठकर बातचीत करनी शुरु की-"यहाँ कोई नहीं है, क्या एक बात पूछें आपसे?" वसन्तक ने पूछा। उदयन ने पूछने के लिए कहा।

"आपको पद्मावती अधिक प्यारी है, या वासवदत्ता?" वसन्तक ने पूछा।

"मैं कुछ नहीं कह सकती। अगर वे पास न हों, तो मैं अकेलापन अनुभव करती हैं। सोचने लगती हूँ कि वासवदत्ता भी क्या उनको मेरी तरह ही प्रेम करती थी।" पद्मावती ने कहा।

वासवदत्ता के मुख से निकल गया- "इससे भी अधिक प्रेम करती थी।"

"यह तुम कैसे जानती हो?" पद्मावती ने पूछा।

वासवदत्ता ने हैरान होकर कहा- "नहीं तो क्या वह अपनों की परवाह न करके उनके साथ जाकर उनसे विवाह करती?"

उदयन ने उस प्रश्न का उत्तर देने से इनकार कर दिया। उससे ही पद्मावती जान सकी कि वह वासवदत्ता को अधिक चाहता था। फिर वसन्तक ने राजा के मुख से भी यह बात कहलाई। यह सुन वासवदत्ता ने कहा-"इतने कष्टों का परिणाम यह हो तो काफी है।"

पद्मावती की दासी ने अवश्य कहा- "देखिये जी, राजा किस तरह की टेढ़ी बात कर रहे हैं।"

"क्या यह प्रशंसनीय बात नहीं है कि वे गुणवती वासवदत्ता को अभी तक नहीं भूल पाये हैं?" पद्मावती ने पूछा।

वासवदत्ता ने झट पद्मावती से कहा- "तुम कितनी उत्तम और उदार हो, यह तुम्हारी बातें ही बता रही हैं।" फिर वह पद्मावती को राजा के पास भेजकर कहीं और चली गई।

कुछ दिन बीत गये। पद्मावती को जबर्दस्त सिर दर्द हुआ। उसने आराम करना चाहा, और अवन्तिका को बुलाने के लिए कहा। उसने बताया कि वह अच्छी अच्छी कहानियाँ सुनाकर उसका



दर्द दूर कर देगी। एक दासी ने जाकर बसन्तक से कहा कि वह महाराजा को भी भेज दे।

उदयन और विदूषक जब कमरे में आये तो वहाँ कोई न था। पलङ्ग अवश्य था। उदयन पलङ्ग पर सो गया, और बसन्तक से कहा कि जब तक पद्मावती न आये, तब तक वह कहानियाँ सुनाये। वह कुछ सुना रहा था कि राजा सो गया। वह उठकर चला गया।

जल्दी ही वासवदत्ता वहाँ आई। कमरे में एक छोटा दीया जल रहा था। उस रोशनी में अपने पति को पलङ्ग पर लेटा देख, सोचा कि पद्मावती लेटी हुई थी। "एक छोटा-सा दीया छोड़ उनको सब अकेला छोड़ गये हैं।" सोचती वह विस्तरे पर जा बैठी। फिर वह भी लेट गई।

इतने में उदयन नींद में "बासवदत्ता, बासवदत्ता" चिल्लाने लगा।

वासवदत्ता झट उठ खड़ी हुई- "यह मेरा पति है। पद्मावती नहीं है। कहीं उन्होंने मुझे देख तो नहीं लिया? देख लिया तो यौगन्धराय की सारी चाल बेकार जायेगी। अगर यह मालूम हो गया



कि मैं जीवित हूँ, दर्शक महाराजा मेरे पति की सहायता न करेगा।" उसने सोचा।

परन्तु वह वहाँ से न गई। वहाँ कोई न था। इसलिए अपने पति को जी भर देखती वहीं खड़ी रही। यही नहीं, उदयन जब नींद में बातें कर रहा था, तो उसने उसके प्रश्नों का उत्तर भी दिया था। आखिर जब उसको यह सुझा भी कि उसका वहाँ रहना ठीक न था, तो भी उसके बढ़े हुए हाथ को धीमे से पलङ्ग पर रखने की कोशिश भी की थी। जब वह जा रही थी तो उदयन ने आँखें खोलकर कहा-"ठहरो, वासवदत्ता, ठहरो।" वह चिल्लाया। उदयन उस दिशा की ओर गया, जिस तरफ वासवदत्ता गई थी। अब उसका सिर दरवाजे पर लगा, तो उसे सन्देह हुआ कि कहीं वह सपना तो नहीं देख रहा था।

इतने में वसन्तक आया। जो कुछ राजा ने कहा उसे सुनकर उसने कहा कि वह निश्चय ही सपना देख रहा था।

अरुणी से युद्ध करने के लिए उदयन का मन्त्री, रुमण्वन्त सेना एकत्रित व



सन्नद्ध करके आया। दर्शक महाराजा ने भी अपनी सेना सिद्ध करके उदयन के पास खबर भेजी कि वह सम्मिलित सेना का नेतृत्व करे। उदयन पलङ्ग पर से उठकर चला गया।

युद्ध में वत्स राजा की विजय हुई। उसने अपना खोया राज्य फिर पाया, और तो और उसको उसकी वीणा, घोषयती भी मिली। वह किसी को नर्मदा के किनारे मिली थी, और जब वह कोशाम्बी राजमहल के सामने बजा रहा था, तो उदयन ने उसे सुनकर पहचान लिया। घोषवती देखते ही उसे वासवदत्ता याद हो आई। वह अपने शोक को काबू में न रख सका।

उसी समय उज्जैन से प्रद्योत ने दो चित्र भिजवाये। वे बासवदत्ता और उदयन के थे। उनको रखकर ही उनका विवाह संस्कार किया गया था। वासवदत्ता का चित्र देखते ही पद्मावती ने अवन्तिका को पहचान लिया। "वासवदत्ता और इस चित्र में समानता है न?" पद्मावती ने पूछा। "समान ही नहीं, यह चित्र वासवदत्ता का ही है।" उदयन ने कहा। पद्मावती ने बीच में कहा- "इस तरह की स्त्री यहाँ है।" उदयन ने उसे तुरन्त अवन्तिका को बुढाकर लाने को कहा। पद्मावती जाकर वासवदत्ता को बुला लाई। ब्राह्मण के वेप में यौगन्धराय भी आया।

सत्य प्रकट हो गया। यौगन्धराय ने बताया कि क्यों उसने यह नाटक खेला था। उसने राजा से क्षमा माँगी। उदयन ने क्षमा स्वीकार न करके, अपितु अपनी कृतज्ञता व्यक्त की। उसके बाद वह अपनी दोनों पत्नियों के साथ सुख से रहा।



खराब शिष्य

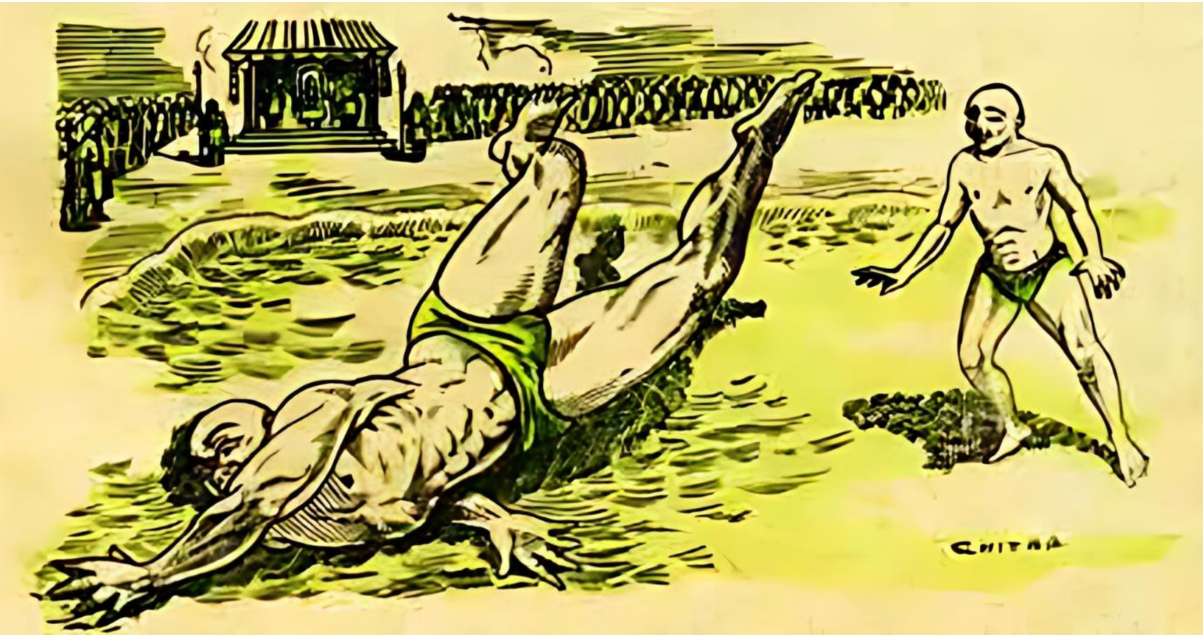
एक राज्य में एक मशहूर पहलवान था। वह उस्ताद था। उसके पास कुश्ती सीखने के लिए दूर दूर से नौजवान आया करते। उस्ताद कुश्ती के एक सौ चालीस दाँव-पेंच जानता था। उसने उन सब दावों को एक ऐसे शिष्य को सिखाया, जिसको वह अच्छा समझता था।

कुछ दिनों बाद उस शिष्य ने राजा के पास जाकर कहा-"महाराज! राज्य में मुझसे बढ़कर कोई पहलवान नहीं है। मैं अपने उस्ताद को भी हरा सकता हूँ। क्योंकि वे बूढ़े हैं और मेरे गुरु हैं और मैं कृतज्ञ हूँ। इसलिए मैं उनको नहीं ललकार रहा हूँ।" शिष्य की बात सुनते ही राजा को गुस्सा आ गया। उस गुरु के प्रति भी जिसने उसे सब कुछ सिखाया था, उसमें कृतज्ञता न थी, राजा ने उसे डाँटा फटकारा। उसने कहा-"फिर भी पता लग जायेगा कि तुम्हारी बातों में कितनी सचाई है। तुम दोनों की कुश्ती निश्चित करता हूँ।"

गुरु शिष्य की कुश्ती देखने के लिए बहुत से लोग आये। बलवान शिष्य बूढ़े गुरु पर कूदा। गुरु जानता था कि ताकत में वह शिष्य के बराबर न था। इसलिए उसने एक ऐसे दाँव का उपयोग किया, जिसे उसने शिष्य को नहीं सिखाया था।

"तुमने मुझे यह दाँव नहीं सिखाया। यह ठीक नहीं है।" शिष्य ने धूल झाड़ते उठते हुए कहा।

"इसलिए कि ऐसा मौका भी आ सकता है, मैंने तुम्हें नहीं सिखाया था।" बूढ़े गुरु ने कहा। राजा और दर्शकों ने गुरु की प्रशंसा की।





बज्रगिरि के राजा विक्रमसिंह की एक लड़की थी। उसका नाम था पद्ममुखी। उसके सौन्दर्य की ख्याति दूर दूर तक फैली हुई थी। उससे विवाह करने के लिए कई देशों के राजकुमारों ने प्रयास किया। परन्तु उनमें से रत्नगिरि के राजकुमार, इन्द्रवर्मा से ही उसने विवाह करने का निश्चय किया। उससे शादी करने की इच्छा रखनेवालों में शृङ्गपुर का राजा कालकेतु भी था। उसकी माँ ने उससे कहा-"बेटा, तुम्हारी पत्नी हो, तो पद्ममुखी-सी हो। तुम विक्रमसिंह से बातचीत करो। तेरे सम्बन्ध को वे अवश्य स्वीकार करेंगे।" उसने लड़के को यह समझाकर भेजा। कालकेतु ने वज्रगिरि पहुँचकर, विक्रमसिंह के सामने अपनी इच्छा व्यक्त की। विक्रमसिंह ने उसकी इच्छा को स्वीकार नहीं किया।

कालकेतु जिस रास्ते आया था, उसी रास्ते सिर नीचा करके चला गया। इसके बाद विक्रमसिंह ने रत्नगिरि से इन्द्रवर्मा को बुलाकर, उसके साथ पद्ममुखी की सगाई कर दी। इन्द्रवर्मा खुशी खुशी रत्नगिरि चला गया, और वहाँ विवाह की तैयारियाँ करवाने लगा।

इतने में पहाड़ी जातियों के जत्थों ने आकर रत्नगिरि पर हमला किया। रत्नगिरि की सेनाओं ने वीरों की तरह इनका सामना तो किया, पर वे जीते नहीं। इन्द्रवर्मा ने होनेवाले ससुर से मदद माँगी। तुरत वज्रगिरि से विक्रमसिंह और उसका लड़का शक्तिसिंह अपनी सेनाओं के साथ इन्द्रवर्मा की मदद के लिए गये।

ये सब खबरें शृङ्गपुर भी पहुँची। कालकेतु से उसकी माँ ने कहा-"बेटा, अब वज्रगिरि की रक्षा करनेवाला कोई

रामसुख

नहीं है। तुम सेना ले जाकर हमला करो और पद्ममुखी को ले आओ। तुम दोनों की यहाँ शादी होगी। तब वह विक्रमसिंह बैठा बैठा पछतायेगा।"

माता की आज्ञा पर कालकेतु वज्रगिरि गया और पद्ममुखी को जबर्दस्ती बन्दी बनाकर शृङ्गपुर ले आया। वह जिस काम पर गया था, उसमें सफल हो गया था इसलिये, उसकी माँ और बहन खुश थीं।

और इस बीच रत्नगिरि के पास युद्ध में विक्रमसिंह अपने प्राण खो बैठा। इन्द्रवर्मा भी गद्दी पर से उतार दिया गया। यह खबर भी शृङ्गपुर पहुँची। इस परिस्थिति में सबने सोचा कि पद्ममुखी अवश्य कालकेतु से विवाह कर लेगी। परन्तु चन्द्रमुखी उससे विवाह करने के लिए बिल्कुल न मानी। "अगर मैं कभी शादी करूँगी तो इन्द्रवर्मा से ही करूँगी। नहीं तो सन्यासिनी की तरह सारा जीवन बिता दूँगी।"

कालकेतु स्वाभिमानी था। उसकी माँ ने उन दोनों का जैसे भी हो विवाह करने की ठानी। परन्तु वह यह न चाहता था।

"जब वह चाहेगी तभी विवाह करूँगा। जल्दी क्या है?" उसने कहा।



उसकी माँ ने पद्ममुखी को सीधे ढङ्ग से मनाने की कोशिश की। पर वह न मानी। उसे डरा धमकाकर भी देखा। इसलिए उसने चन्द्रमुखी से कहा-"मैंने सोचा था कि तुम मेरी बहू हो कर मेरी मर्यादा रखोगी। पर तुमने क्यों कि उसके लिए नहीं माना, इसलिये आज से तुम केवल बन्दी ही हो।" उसके बाद वह उससे हर तरह के काम करवाती।

सवेरे जब उठती तब से वह रात में काफी देर तक कभी कपड़े धोती, कभी रसोई करती, कभी बर्तन माञ्जती, आदि काम

करती रहती। फिर एक कोने में सो जाती। यह सब वह करने के लिए मान गई। पर यह कालकेतु से शादी करने के लिए नहीं मानी। माँ का यह व्यवहार न कालकेतु का भाया, न उसकी बहन इन्दुमति को ही। इन्दुमति ने तो कुछ न कहा। पर कालकेतु ने अपनी माँ से कहा-"माँ, वह लड़की राजकुमारी है। उसको गौरवपूर्वक देखना हमारे लिए गौरवपूर्ण है।" परन्तु उसकी माँ ने कहा-"बेटा, उसको हम पर भी गौरव नहीं है। अगर तुम चाहती हो कि वह रास्ते पर आये, तो उसके लिए यही तरीका है। देखते रहो, मैं कभी न कभी उसको तुम्हारी पत्नी बनाकर ही छोड़ूँगी।" कालकेतु इस पर कुछ कह न पाया।

तीन साल तक चन्द्रमुखी कैद की सब मुसीबतें झेलती रही। वह चिन्ता और अधिक काम के कारण सूखकर काँटा हो गई थी। एक दिन वह मैले कपड़े लेकर धोने के लिए नदी के पास गई। नदी के उस पार उसने एक नाव हिलती देखी। वह एक एक कपड़ा धोकर रखती जाती और नाव की ओर देखती



जाती। कुछ देर बाद उसने देखा कि नाव बहुत पास थी। उस नाव में दो आदमी थे। वह उठकर उनकी ओर आश्चर्य से देखने लगी। उसने दूर ही से देखा कि उस नाव में उसका भाई शक्तिसिंह और इन्द्रवर्मा, जिसको उसका पति होना था, थे। अगर उनको न देखती तो उनके किनारे तक आने से पहले ही यह भाग जाती। पर वे उसे न पहचान सके। शक्तिसिंह ने पूछा-"क्या यह वही शृङ्गपुर है, जिसका राजा कालकेतु है?"

चन्द्रमुखी ने सिर हिलाकर कहा "हाँ"।

"वे वज्रगिरि की राजकुमारी पद्ममुखी को उठा लाये थे। क्या वह जीवित है?" शक्तिसिंह ने फिर पूछा।

"उसकी महारानी बनने की इच्छा नहीं है। राजकुटुम्ब के लिए कपड़े धोकर गुलामी कर रही है। शक्ति, मुझे पहचाना नहीं?" चन्द्रमुखी ने पूछा।

शक्तिसिंह बहन का आलिङ्गन करके रोया, इन्द्रवर्मा की आखें भी डबडबाई। पद्ममुखी ने उन दोनों को अपना किस्सा सुनाया।

"जो हुआ सो हुआ, अब हमारा बेड़ा पार हो गया है। पहाड़ी जाति के राजा



को सब ने मिलाकर हरा दिया है। अब रत्नागिरि का राजा इन्द्रवर्मा है। जब तक तुम्हारा पता ठिकाना नहीं मालूम हो जाता, तब तक राज्याभिषेक न करवाना चाहा। हम पूरी सेना के साथ आये हैं। परन्तु कहीं तुम पर आपत्ति न आये, इसलिए हमने युद्ध घोषित नहीं किया है। क्योंकि अब तुम हमें दीख गई हो, इसलिए बिना युद्ध के ही शत्रु को वश में कर लेंगे।" शक्तिसिंह ने कहा।

"शक्ति, हमें युद्ध से काम नहीं है। और किसी उपाय की भी आवश्यकता नहीं है। चन्द्रमुखी को इसी नाव में चढ़ाकर हम ले जायेंगे।" इन्द्रवर्मा ने कहा।

"इन्द्र! इसमें फिर बदला क्या हुआ? इस राक्षस को, जिसने मेरी बहन पर इतने जुल्म ढाये हैं, यूँ ही छोड़ दूँ? यह नहीं हो सकता, फल सवेरे अचानक हम आकर किले पर हमला करेंगे। हमारे आने तक जैसे भी हो, आत्मरक्षा कर लो।" शक्तिसिंह ने अपनी बहन से कहा। नाव चली गई।

"मेरे कष्टों के दिन लद गये हैं। मैं अब से दासी नहीं हूँ। मैं एक राजकुमार की बहन हूँ, और एक राजा की होनेवाली



पत्नी।" चन्द्रमुखी कपड़े नदी में फेंककर वापस चली गई।

उसको देखते ही राजमाता ने पूछा- "कपड़े धोने में इतनी देर लग गई। बाकी काम कम करोगी? तेरी अक्ल ठिकाने करनी होगी।"

"मुझ से अदव से बात करो।" चन्द्रमुखी ने इस तरह कहा, जैसे कोड़ा मार रही हो।

"अरे तुम्हें इतना घमण्ड?" राजमाता ने चन्द्रमुखी को पिटवाने के लिए सैनिकों को बुलाया। चन्द्रमुखी ने उससे कहा-"मैंने कल ही रानी होने का निश्चय किया है। अगर किसी ने आज मेरे शरीर पर हाथ रखा, कल उसके प्राण निकलवा दूँगी।"

यह सुनते ही राजमाता खुशी से फूली न समाई। उसने कालकेतु के पास खबर भिजवाई। वह भी खुश हुआ कि चन्द्रमुखी आखिर उससे विवाह करने के लिए मान गई थी। वह विवाह के लिए तैयारियाँ करवाने लगा।

अगले दिन सबेरा हुआ। राजमहल के आङ्गन में भीड़ ही भीड़ थी, विवाह की तैयारियाँ हो रही थीं। सैनिक हाँफते हाँफते आये। उन्होंने कहा कि राजमहल के सामने युद्ध हो रहा था। एक बड़ी सेना



ने आकर आक्रमण किया था। राजमहल में जितने लोग थे, वे भी हथियार लेकर राजा के साथ शत्रु का मुकाबला करने गये।

स्त्रियाँ अन्तःपुर में भय से काँप रही थीं। युद्ध का कोलाहल निरन्तर पास आता जाता था। बीच बीच में सैनिक आकर हार की खबर दे रहे थे। यह भी पता लगा कि कालकेतु मारा गया था। राजमाता का मुँह उतर आया।

थोड़ी देर में वहाँ एक सेनापति आया। उसने स्त्रियों को ध्यान से देखा-"आप में चन्द्रमुखी देवी कौन हैं? सिवाय उनके और उनकी दासियों के सब स्त्रियों के सिर कटवा दिये जायें, यह महाराजा शक्तिसिंह की आज्ञा है।" किसी ने कुछ न कहा। केवल इन्दुमति ने एक बार सेनापति की ओर देखा, और फिर चन्द्रमुखी को। उसने सिर झुका लिया। चन्द्रमुखी ने एक कदम आगे रखकर कहा-"में चन्द्रमुखी हूँ। यहाँ जितनी भी स्त्रियाँ हैं, वे सब मेरी दासियाँ हैं।"

सेनापति ने झुककर उसको प्रणाम किया, और वहाँ से चला गया। उसके साथ आया हुआ सैनिक राजमाता, और अन्य दासियों को हथकड़ी लगाकर ले गया।

इसके कुछ दिनों बाद इन्द्रवर्मा ने चन्द्रमुखी से विवाह करके राज्याभिषेक भी करवाया। चन्द्रमुखी ने अपने भाई को इन्दुमति को दिखाकर कहा-"इस लड़की ने मुझे भाभी बनाने के लिए बहुत कोशिश की। मुझे कभी भी इसने नहीं सताया। अगर तुम इससे शादी करो तो मुझे बहुत खुशी होगी।" शक्तिसिंह इसके लिए मान गया। शक्तिसिंह ने उससे शादी करके उसको अपनी रानी बनाया। कालकेतु की माँ जीवन पर्यन्त गुलामी करती रही। उससे चन्द्रमुखी ने ठीक बदला लिया।





गरीब का भार

विक्रमार्क फिर पेड़ के पास गया। शव उतारकर, कन्धे पर डाल, वह चुपचाप फिर श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शब में स्थित वेताल ने कहा-"राजा, सचमुच तुम्हारा धीरज आश्चर्यजनक है। तुम्हें देखकर मुझे मित्रबिन्दु नाम का मछियारा याद आ रहा है। कहीं तुम्हें थकान न हो मैं मित्रबिन्दु की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

किसी जमाने में पूर्वी समुद्र तट पर मित्रबिन्दु नाम का मछियारा रहा करता था। वह बहुत गरीब था। रोज समुद्र में अपनी तमेड़ पर वह चला जाता, मछलियों पकड़कर लाता, उन्हें बेचकर जो कुछ मिलता उससे अपनी पत्नी और पाँच बच्चों का पालन-पोषण करता। समुद्र में एक ही



वह उसके जालों की मरम्मत करती। बंसी ठीक करती। घर का काम काज भी देखती। पति घर आने तक सोचती रहती न मालूम मेरा पति किन मुसीबतों का सामना कर रहा होगा।

मित्रविन्दु भी जब से घर से निकलता और जब तक घर न पहुँच जाता, हमेशा अपनी पत्नी के बारे में सोचता रहता और उसके कष्ट देखकर तरस खाता।

जगह मछलियाँ मिला करती और वह वह जगह जानता था। इसलिए चाहे तूफ़ान हो या कुछ और वह मछलियाँ पकड़कर ले आता था। उसकी आय रोजमर्रे के खर्च के लिए ही काफी थी। इसलिए जिस दिन वह मछलियाँ पकड़ने न जाता उस दिन वह पत्नी और बच्चे फाका करते।

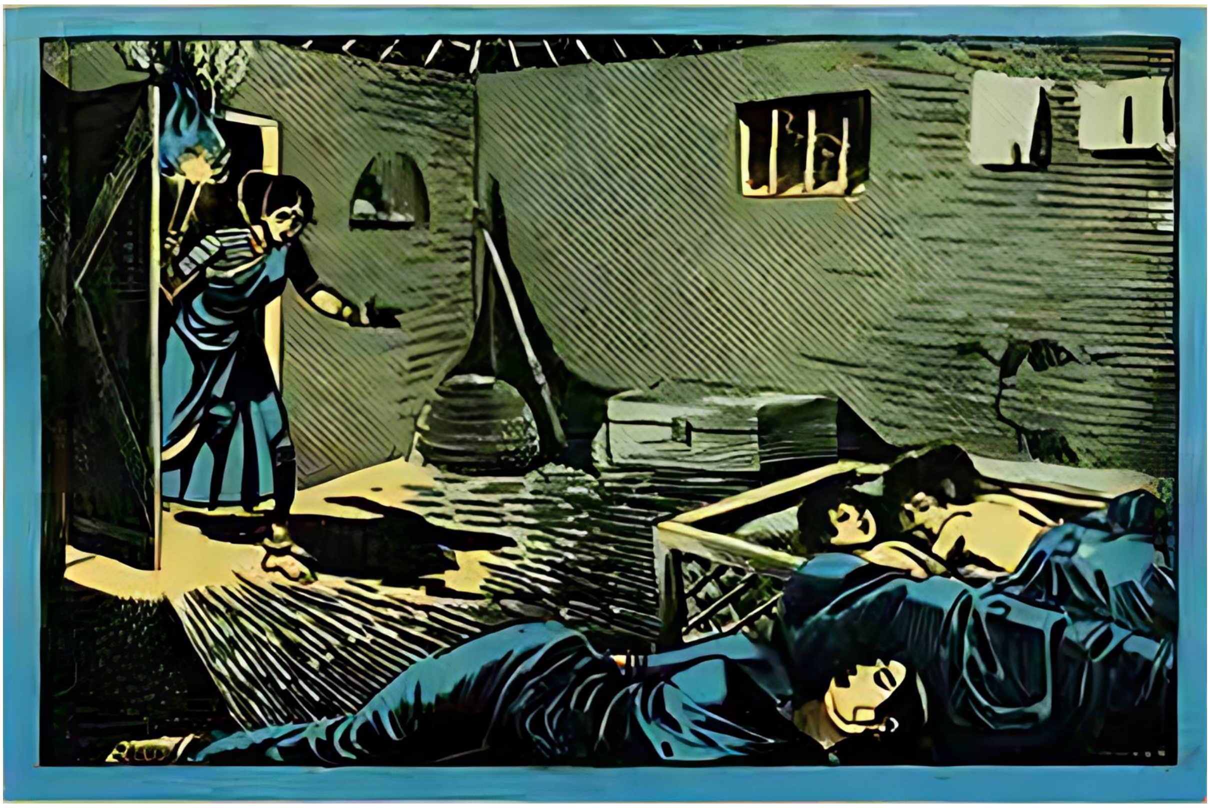
इस तरह मित्रबिन्दु समुद्र से मुकाबला करता, कष्ट झेलता, गृहस्थी चलाता आ रहा था। उसकी मदद करनेवाले और मछियारे भी न थे। उसकी पत्नी ही सर्वस्व थी।

उसे इसका भी खेद रहता कि वह पत्नी और बच्चों को और खुशी नहीं बना पा रहा था। पति पत्नी दोनों ही अच्छे हृदयवाले थे।

एक बार पास में रहनेवाला एक गरीब मर गया। उसकी पत्नी और उसके दो बच्चे अनाथ हो गये। मित्रबिन्दु ने उनके लिए अपने घर के पास ही एक झोपड़ा बनाया। इससे अधिक वह उन अनाथों के लिए कुछ न कर पाया। वह अनाथ स्त्री, जैसा उससे बन सका, अपने बच्चों का पालन पोषण करती आ रही थी।

कुछ दिन बीत गये। एक दिन मित्रबिन्दु तमेड़ लेकर निकला ही था कि जोर से तूफान जाने लगा। मित्रबिन्दु की पत्नी ने अन्धेरा होते ही बच्चों को थोड़ी-सी माँड़ देकर सुला दिया और स्वयं पति की प्रतीक्षा करने लगी। जब वह सोचती कि उसका पति उनके लिए समुद्र से इस समय भी लोहा ले रहा था, उसका दिल टूट सा जाता। उसने सोचा कि अगर लड़के बड़े हो गये, तो पिता की मदद करेंगे और उसका भार कम होगा। आधी रात हो गई पर मित्रबिन्दु वापस न आया।

पत्नी का भय और बढ़ा। वह एक दिया जलाकर समुद्र के किनारे की ओर गई। रास्ते में उस अनाथ स्त्री की झोपड़ी दिखाई दी। झोपड़ी का किबाड़ तूफ़ान में इधर उधर हिल रहा था। मित्रबिन्दु की पत्नी को आश्चर्य हुआ, वह दीया लेकर झोपड़ी में गई। उसे झोपड़ी में अनाथ स्त्री की लाश दिखाई दी। क्योंकि छत पर छेद थे, उस पर पानी इस तरह गिर रहा था, जैसे वह आँसू बहा रही हो। एक तरफ सूखी जगह पर चीथड़ों पर उसके दोनों बच्चे दिखाई दिये।



उन बच्चों को देखते ही उसका दिल थम-सा गया। वे बच्चे, जो पहले ही पिता खो चुके थे, अब माँ भी खो बैठे थे। ये मासूम बच्चे आनेवाले कष्टों के बारे में क्या जानते हैं? अब उनका कौन कहाँ है?

यह सोचते ही उसको अपने पाँचों बच्चे याद हो आये। वह और कुछ न सोच सकी। उन दोनों बच्चों को ही बह उठाकर अपने घर ले गई और अपने पाँचों बच्चों के साथ उन्हें भी लिटा दिया। तब फिर उसे पति का ख्याल आया।

समुद्र का शोर तूफान के शोर के साथ सुनाई पड़ रहा था। पाँच बच्चों के पालन पोषण के लिए मेरे पति को इतना परिश्रम करना पड़ता है। इन दो बच्चों को ले गई तो कहीं वह खौल तो नहीं उठेगा? अगर उसने आकर मुझे मारा भी तो उसका कोई कसूर नहीं है। पति की मार के डर की अपेक्षा उसे यह भय लग रहा था कि यदि वह न आया तो?

सवेरा हो रहा था कि मित्रबिन्दु ने घर आकर किवाड़ खटखटाये। पत्नी ने किवाड़ खोले। गीले कपड़ों में अपने पति



को देखकर कहा-"मैं डर के मारे अब तक मरी जा रही थी।"

"क्या तूफ़ान था और क्या बारिश! इस बारिश में तुम और बच्चों पर क्या बीत रही होगी; मैं यही सोचता रहा। एक मछली नहीं मिली। सारा जाल फट गया। तमेड़ की रस्सी भी टूट गई। जो हुआ सो हुआ...." मित्रविन्दु ने कहा।

"वह विचारी अनाथ स्त्री रात को मर गई। दोनों बच्चे अभी बहुत छोटे हैं। पता नहीं उनकी गति क्या होगी।" पत्नी ने कहा ।

मित्रबिन्दु ने हैरान होकर कहा-"तो जा, उनको ले आ। पाँच बच्चों के सात हो जायेंगे। जो भगवान हमको माँड़ दे रहा है, क्या उनको नहीं देगा? जरूरत हुई तो और अधिक मेहनत करूँगा और उनका भी जैसे भी हो, पालन पोषण करूँगा।"

पर जब उसने पत्नी को हिलते नहीं देखा तो उसने पूछा-"क्यों, हिचकिचाती खड़ी हो? तुम जाकर उन बच्चों को ले आओ।"

"मैं कुछ भी नहीं हिचकिचा रही। अन्दर आकर देखो।" पत्नी ने कहा।



क्योंकि पत्नी उन बच्चों को पहले ही ले आई थी इसलिए मित्रविन्दु बहुत खुश हुआ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा- "राजा, मित्रविन्दु क्या मूर्ख है, या गरीबी की मुसीबतों को, वह ठीक ठीक न जानता था? जब वह अपना घरवार चलाने के लिए ही इतने कष्ट उठा रहा था, तो अनाथ बच्चों के भरण पोषण की जिम्मेवारी उसने अपने ऊपर क्यों ले ली? यदि वह भगवान पर भार डालनेवाला था, तो उनका भार भी वह भगवान पर डाल सकता था न? उसने अपनी जिम्मेवारी क्यों बढ़ा ली? इन प्रश्नों का उत्तर तुमने जान बूझकर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

यह सुन विक्रमार्क ने कहा- "मित्रविन्दु मूर्ख न था। मूर्ख, अपनी पत्नी और बच्चों के लिए इतनी मेहनत नहीं करता। तूफान और वर्षा में रात भर समुद्र में धक्के खा खाकर, जिसको एक मछली भी न मिलती हो वह गरीबी के कष्ट भलीभाँति जानता है।

यह सोच कि उसकी अपनी मेहनत काफी न थी उसने भगवान पर भरोसा कर रखा था। भगवान पर भरोसा करके वह खाली बैठनेवाला न था। जो अपने बच्चों के लिए भी जी तोड़ मेहनत कर रहा हो, वह कभी दूसरों के बच्चों को भगवान के भरोसे नहीं छोड़ेगा। इसलिए वह अनाथ बच्चों को पालने लगा था।

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और फिर पेड़ पर जा बैठा।





एक जमाने में पाटलिपुत्र का राजा उग्रसेन था। यह बड़ा वीर था। उसके सामन्त भी सब बड़े-बड़े योद्धा थे। इसलिए उग्रसेन महाराजा को देखते ही उनके शत्रु घबराते थे। परन्तु उनके सामन्तों में कुछ ऐसे भी थे, जो अन्यायी व अत्यचारी थे। क्योंकि वे राजा के विश्वासपात्र थे इसलिए वे निरंकुश भी हो गये थे।

मामूली योद्धाओं में सहदेव नाम का एक युवक था, जिस पर राजा को बहुत विश्वास था। यह देख कि दुष्ट सामन्त मनमानी करके राजा पर कलङ्क लगा रहे थे; प्रजा की रक्षा करने के लिए उन दुष्टों को दण्ड देने के लिए उसने बीड़ा उठाया। वह अत्याचारियों को लूटता और जब मौका मिलता तो उनको सज़ा भी देता। जो कुछ वह लूटता, मामूली लोगों में उसे वह बाँट देता।

जब राजा के पास यह शिकायत पहुँची कि सहदेव डाकू बन गया था, राजा ने उसको पकड़ने के लिए सैनिक भेजे। पर सहदेव उनके हाथ में न आया। तब महाराजा ने सहदेव को डाकू घोषित कर दिया और उसने हर किसी को उसको मारने का अधिकार दे दिया।

थोड़ा समय बीत गया। एक दिन रात को उग्रसेन को सपने में एक देवी ने प्रकट होकर कहा-" राजा, उठो। जाकर चोरी करके आओ। यह ईश्वर की आज्ञा है।" महाराजा झट उठा। इस विचित्र सपने को याद करके उसका आश्चर्य हुआ। पर अभी उसने आँखें बन्द की थीं कि नहीं कि फिर उसी देवी ने कहा-

विजयराम

"अगर तुमने जाकर चोरी न की तो तुम्हारे पास न राज्य रहेगा, न प्राण ही। यह ईश्वर की अज्ञा है।"

दो बार उसने यह सपना देखा था, निश्चय न कर पाया कि क्या किया जाय। जब उसने तीसरी बार सोने का प्रयत्न किया, तो तीसरी बार भी यही सपना आया। इसमें अवश्य कोई दैवीय प्रेरणा है। यह सोच उसने चोरी करने का निश्चय किया। वह पलङ्ग पर से उठा। चुपचाप राजमहल से निकल गया।

"अगर मेरे नौकरों ने मुझे इस तरह देखा, तो वे क्या सोचेंगे?" उसने सोचा। परन्तु सौमाम्यवश उसे किसी ने न देखा। वह अस्तबल में गया। अपने घोड़े पर सवार हो, जङ्गल की ओर निकला। चोर की तरह उसने अपने मुख के निचले भाग को और सिर को ढक लिया था।

सोचते-सोचते उसमें चोरों के प्रति आदर भी पैदा हुआ। चोरी करने के लिए कितनी सूझ-बूझ होनी चाहिये। कितना साहस चाहिये। पकड़े गये तो लोग पीट-पीटकर



मार देंगे। अगर लोगों ने न मारा भी तो राजा फाँसी पर चढ़वा देगा। मैं राजा हूँ, फिर भी चोरी करने में मुझे खतरा है। चोरी मानों की भी और पकड़ा गया, इससे पहले कि मैं बताऊँ कि मैं कौन हूँ, पकड़नेवालों ने मार दिया तो? अगर उनके मारने से पहले मैंने साबित भी कर दिया कि मैं राजा हूँ, तो जीवन भर यह अपमान ताजा रहेगा। अकेला चोरी नहीं कर सकता, अगर मुझे किसी चोर का साथ मिल गया तो अच्छा होगा।" राजा ने सोचा। पर उसके जङ्गल में घुसने के थोड़ी देर बाद काले

घोड़े पर सवार हो, मुख पर नकाब पहने एक व्यक्ति सामने आया।

"तुम इतनी रात में कहाँ जा रहे हो? तुम्हारा नाम क्या है?" राजा ने पूछा। परन्तु दूसरे आदमी ने कुछ न कहा।

राजा उस पर लपका-"अपनी रक्षा करो।"

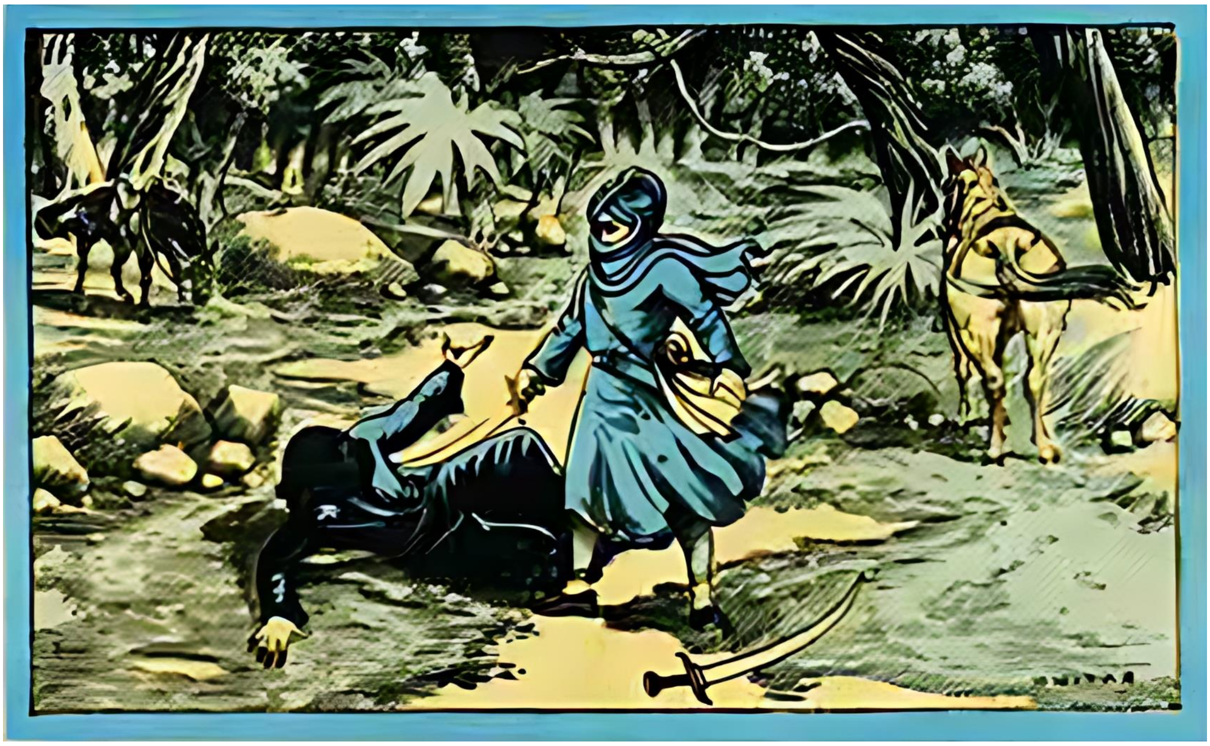
घोड़ों पर सवार होकर ही दोनों में कुछ देर युद्ध चलता रहा। फिर उन्होंने उतरकर युद्ध किया। आखिर राजा की ही विजय हुई। दूसरा गिर गया। उसने राजा से कहा-"मैंने तुमसे अच्छा योद्धा अभी तक नहीं देखा है। चाहो तो मुझे मार दो।"

"तुम्हें मार देने से मुझे क्या फायदा? तुम भी अच्छे योद्धा हो। हो सकता है कि तुम्हारे कारण मेरा लाभ हो। तुम्हारा नाम क्या है?" महाराजा ने पूछा।

"मेरा नाम सहदेव है।" पराजित व्यक्ति ने कहा।

"ओह, तो तुम भी चोर हो, चलो, हम दोनों कहीं जाकर चोरी करें। क्या राजमहल में जाकर सेंध लगायें?" राजा ने पूछा।

"नहीं, मैंने कभी अच्छे आदमियों को तङ्ग नहीं किया। महाराजा का मैं



कभी भी किसी प्रकार का अपकार न करूँगा। चाहो तो शूरसेन का घर लूटें।" सहदेव ने कहा ।

शूरसेन, उग्रसेन के सामन्तों में मुख्य था। महाराजा की बहन से शादी की थी। इसलिए निकट सम्बन्धी भी था। "तुम तो राजभक्त मालूम होते हो, फिर उसकी बहन के पति के घर कैसे डाका डालोगे?" राजा ने पूछा।

"मेरी राजभक्ति शूरसेन की राजभक्ति से अधिक है। जरूरत पड़ने पर जान भी न्योछावर कर सकता हूँ। मैंने यह भी सुना है कि राजा की बहन उसके कारण बिल्कुल सुख नहीं भोग रही है।" सहदेव ने कहा।

यह सुन राजा को आश्चर्य हुआ। वह अब तक यह समझता आया था कि शूरसेन उसका दायाँ हाथ है और पत्नी को बहुत चाहता था। पर सहदेव कुछ और कह रहा था। "चलो, तो वहीं चोरी करे।" राजा ने कहा। दोनों घोड़ों पर सवार हो शूरसेन के किले में पहुँचे। सहदेव क्योंकि पक्का चोर था इसलिए वह पहरेदारों की आँखों में धूल झोंक कर राजा को साथ लेकर





किले में घुसा। राजा उसकी चतुराई पर चकित था। "अगर आज यह मेरे साथ न होता तो मैं पहरेदारों के हाथ आ जाता।" उसने सोचा।

सहदेव ने कहा तो नहीं, पर वह जान गया कि उसका साथी चोरी करने में अनुभवी न था। उसने महाराजा को एक अन्धेरी जगह पर छोड़कर कहा-"मैं अभी जाकर धन लाता हूँ। मेरे आने तक तुम यहीं रहो। जाना मत।"

थोड़ी देर में वह धन और गहनों के बोरे उठाकर वहाँ आया। राजा को उसे देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। "अगर हम इसको घोड़ों पर लाद कर जल्दी चले न गये, तो हम पकड़े जा सकते हैं।" उसने सहदेव से कहा।

"जल्दी न करो। अभी एक और चोरी करनी है। ऊपरली मञ्जिल पर सोने के कमरे में शूरसेन की मोतियाँ जड़ी सोने की जीन है। उसको बिना लिए जाना मेरे लिए अपमानजनक है।" यह कह सहदेव गायब हो गया।

वह चुपचाप दूसरे मञ्जिल पर शूरसेन के कमरे में गया। पलङ्ग पर शूरसेन और उसकी पत्नी सो रहे थे। सहदेव जान

गया कि जीन कहाँ थी। जब वह उसे उठाकर ले जा रहा था तो थोड़ी आवाज़ हुई। शूरसेन झट उठ बैठा। "कौन है वहाँ? कहाँ है तलवार?" वह चिल्लाया।

उसका चिल्लाना सुन पत्नी उठी। उसने पूछा-"क्यों, क्या बात है? क्यों चिल्ला रहे हैं?"

"कमरे में कोई आया है। आहट हुई है।" शूरसेन ने कहा।

"हवा में पेड़ की टहनियाँ हिली होंगी। आप रोज कोई खराब सपना देखते हैं और उठ बैठते हैं। लगता है, आपके

"मन में कोई बात है जो आपको यों सता रही है। क्या बात है, जरा हमें भी बता दीजिये न।" पत्नी ने कहा। शूरसेन ने अट्टहास कर कहा-"तुम क्यों फिक्र करती हो? कल सब मेरी कठिनाइयाँ खतम हो जायेंगी। कल शाम तक आधा राज्य मेरा हो जायेगा।"

"आपने कल तो यह कहा था कि आप दरबार जायेंगे, मगर यह न बताया कि आपको आधा राज्य दिया जा रहा है।" महाराजा की बहन ने पूछा।

"कोई देगा क्या? हम खुद लेंगे। मैं और मेरे कुछ मित्र दरबार में राजा की हत्या करके राज्य बाँट लेंगे।" दुष्ट शूरसेन ने अपनी पत्नी को उन सामन्तों का नाम बताया, जो साजिश में हिस्सा ले रहे थे।

"जब तक मेरे शरीर में प्राण हैं, तब तक मैं भाई की हत्या नहीं होने दूँगी।" कहकर शूरसेन की पत्नी ने उठने का प्रयत्न किया। शूरसेन ने उसको इतना मारा कि यह बेहोश हो गई। जब वह फिर सो गया तो सहदेव ने अपने साथी से वह सब कहा, जो उसने देखा था, सुना था।



"मेरी तलवार मुझे दे दो। उस राजद्रोही को अभी मार कर भाता हूँ। अगर मैं वापस न आया तो समझना कि मैं मर गया हूँ। तुम चले जाना।"

राजा को अपने कानों पर विश्वास न हुआ कि शूरसेन कुछ सामन्तों से मिलकर षड़यन्त्र कर रहा था, और उसको मारने की कोशिश में था। पर सहदेव को झूठ बोलने की क्या जरूरत थी? इसलिए राजा को विश्वास करना पड़ा कि बात सच थी। उसने सहदेव से पूछा-"क्या तुम्हारी अक्ल मारी गई है? तुम राजा के लिए

प्राण देने के लिए तैयार हो रहे हो, उस राजा ने तुम्हारे लिए क्या किया है?

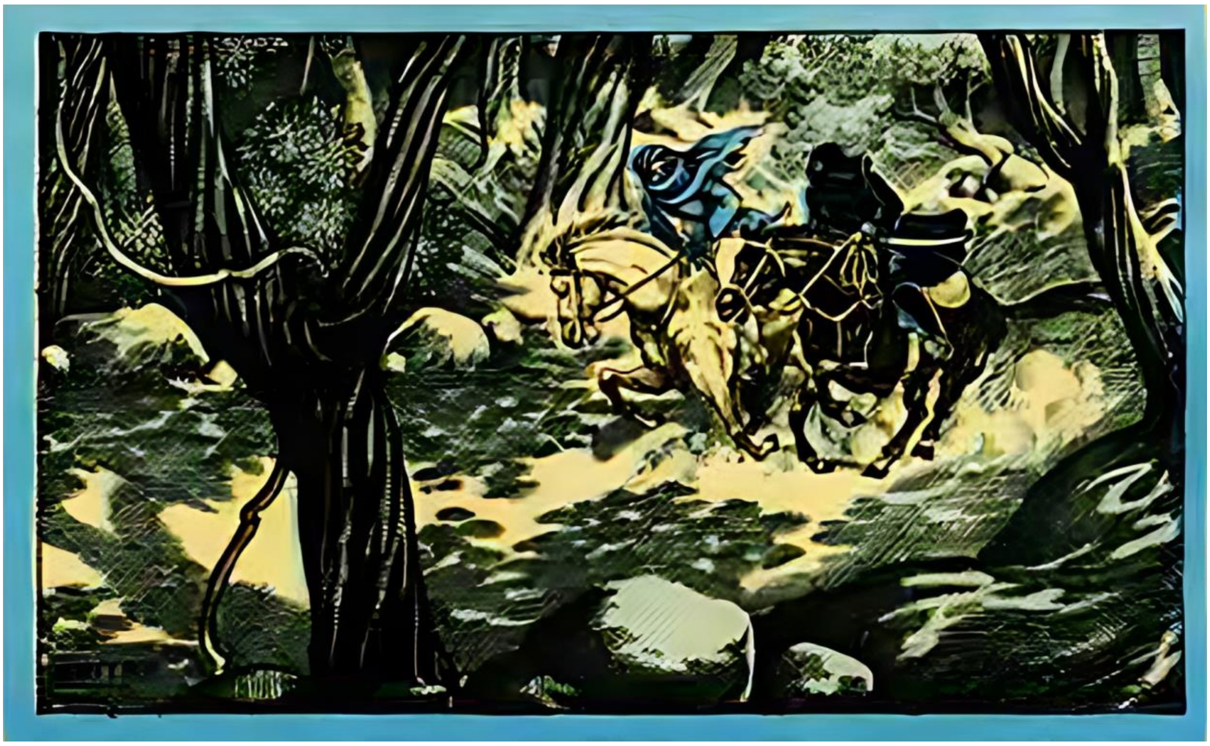
"तुमने मुझे मेरे प्राण दिये हैं, इसलिए कुछ नहीं कर रहा हूँ। नहीं तो इस बात पर तुम्हें मार देता। राजा अच्छा आदमी है। उसमें खराबी होने की गुञ्जाईश नहीं है। दो तलवार।" सहदेव ने कहा।

"नहीं, चलो हम यह राजा को ही बतायें। राजद्रोहियों की बात वे स्वयं देख लेंगे।" राजा ने कहा।

"उनके मित्र और जीजा पर यदि मैं आरोप करूँगा तो क्या वे सुनेंगे? मैं चोर हूँ। मुझे देश निकाले की सज़ा मिली हुई है। मुझे देखते ही वे मुझे फाँसी पर चढ़ा देंगे, मेरी बातें सुनते बैठे नहीं रहेंगे।" सहदेव ने कहा।

"मुझे देश निकाले की सज़ा नहीं मिली है। मैं ही जाकर उनको सावधान करूँगा।" राजा ने कहा। उन दोनों ने एक ऐसी जगह भी तय कर ली, जहाँ उन्होंने बाद में मिलने की ठानी।

सवेरा होने से पहले ही बिना किसी को दीखे वह अपने राजमहल में चला गया। उन सामन्तों को छोड़कर, जो साजिश में



शामिल थे, बाकी को तभी बुलवाया। उसने उनको अपने सपने के बारे में कहा।

यह भी बताया कि वह सहदेव से मिला था। सहदेव ने ही उसको शूरसेन के षड़यन्त्र के विषय में बताया था। सामन्तों को गुस्सा आया। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि वे षड़यन्त्रकारियों से भी जान से लड़ेंगे।

"छोटी-सी बात पर क्यों इतनी बड़ी कार्यवाही की जाये? षड़यन्त्रकारी हम पर आक्रमण तो करेंगे नहीं? एक एक करके आयेंगे ही। हरेक के अपने अपने हथियार काफी हैं।"उग्रसेन महाराजा ने कहा।

यही हुआ। षड़यन्त्रकारियों ने, घेरे जाने पर, अपने हथियार बाहर निकाले। अन्त में जो आया वह शूरसेन था। उसे पकड़कर राजा के सामने लाया गया। उसे मालूम हुआ कि उसके साथी उससे पहले ही बन्दी बना लिये गये थे।

"राजा, यह भी क्या धान्धली है? मैं तुम्हारा जीजा हूँ। क्या तुम अपने सामन्त का इसी प्रकार स्वागत करोगे?"

"नहीं, राजद्रोहियों का इस प्रकार ही स्वागत किया जाता है।" राजा ने कहा।



"किसने यह तुम से कहा है? उसे बुलाओ। मैं उसे अपनी तलवार से जवाब दूँगा।" शूरसेन ने पूछा।

राजा ने अपने आदमी को जङ्गल में उस जगह भेजा, जहाँ उसने सहदेव से मिलने का निश्चय किया था। सहदेव को देखकर कहा-"राजा, तुम्हें बुला रहे हैं।"

"मेरा साथी पकड़ा गया होगा। वह मुझे भी पकड़ने के लिए यह चाल चल रहा है।" इसलिए सहदेव हिचका, परन्तु उसको यह भी ख़याल आया कि राजा ऐसा नीच कार्य न करेगा। इसलिए उस आदमी के साथ राजमहल गया।

उसने राजा से कहा-"महाराज, में चोर हूँ। मुझे देश निकाले की सजा दी जा चुकी है। तो भी आपकी अच्छाई पर भरोसा करके आपकी आज्ञा के अनुसार आया हूँ।"

"पगले! कल जिसको मैंने मारने से छोड़ दिया था, क्या आज मैं उसे मारूँगा?" राजा ने पूछा।

कल रात जङ्गल में क्या आप दिखाई दिये थे?" सहदेव ने आश्चर्य में पूछा।

"हाँ, कल तुमने मुझे चोरी करना सिखाया था। आज तुमसे एक और मदद चाहता हूँ। इस राजद्रोही से द्वन्द्व युद्ध करोगे?" राजा ने पूछा।

सहदेव मान गया, शूरसेन से तलवार ले द्वन्द्व करने लगा। दोनों में काफी देर तक बराबर का युद्ध होता रहा। आखिर वह सौभाग्यवश सहदेव के हाथ मारा गया।

सहदेव पर से सब अपराधों के आरोप वापस ले लिये गये। महाराजा उग्रसेन ने उसको शूरसेन की जागीर दे दी और उसको अपना सामन्त बना लिया।





सात सौ वर्ष पहले वेनिस नगर में दो भाई रहा करते थे। बड़े का नाम निकोलो पोलो और छोटे का नाम माफियो पोलो था। वे व्यापार करते करते कई देश हो आये थे। वे १२६० में कस्तन्तुनिया तक गये। और वहाँ से उनको एक साल तक सफ़र करके चीन देश के तातार सम्राट कुविलाय खान के पास जाने का मौका मिला।

उस समय में यूरोप से पूर्व के देशों तक इस तरह जानेवाला कोई न था। तातार मङ्गोलिया देश की एक जाति थी। वे असभ्य थे। १२०६ में वे अपने पुण्य-स्थल कारकोरम में एकत्रित हुए। उन्होंने तब चङ्गेज़ खान को अपना नेता चुना। चङ्गेज़ खान ने अपने बारह वर्ष के शासन के अन्दर ही चीन के उत्तर के स्वतन्त्र देश काते को जीतकर वश में कर लिया। फिर उसने सिवाय इण्डोचीन, भारत, अरब, यूरोप, पश्चिम यूरोप के बाकी और एशिया को भी जीत लिया। उन्होंने दो पुश्तों में इतना विस्तृत साम्राज्य स्थापित किया कि न उससे पहले न उसके बाद ही इतना विस्तृत साम्राज्य स्थापित किया गया। चङ्गेज़ खान के वारिसों को "बड़े खान" उपाधि भी मिली। काते उसके नीचे ही था। बाकी साम्राज्य तीन खानों के नीचे था। वे बड़े खान के आधीन थे।

काते पर शासन करनेवाले बड़े खानों में कुबलाय पाँचवाँ था। वह चङ्गेज खान का पोता था। उसने पोलो भाइयों का



आदर किया। उनसे उसने संसार के अनेक देशों के बारे में जानकारी प्राप्त की। उसने उनको रोम में रहनेवाले पोप के पास दूत बनाकर भेजना चाहा। पोलो भाई इसके लिए मान गये। पर जब वे जाने को तैयार हुए तो मालूम हुआ कि पोप मर गया था और नये पोप की नियुक्ति नहीं हुई थी। इसलिए वे वेनिस नगर वापस चले गये। वहाँ कुछ दिन रहने के बाद उन्हें भय हुआ कि बड़ा स्वान उनकी प्रतीक्षा कर रहा होगा, अतः वे फिर काते के लिए रवाना हुए।

इस बार उनके साथ मार्को पोलो भी आया। पोलो भाइयों में से बड़े निकोलो का यह लड़का था। यही मार्को पोलो था, जिसने पन्द्रह साल बड़े स्थान के दरबार में नौकरी करके अपने घर पहुँचकर संसार के भ्रमण के विषय में अपने अनुभव लिखे थे।

*   *   *

ज्योर्जिया के राजाओं का नाम डेविड़ मालिक हुआ करता था। यह राजा तातारों का सामन्त था। ज्योर्जिया के लोग खूब सुन्दर और अच्छे योद्धा थे। सिकन्दर जब पश्चिमी देशों पर आक्रमण करने निकला, तब ज्योर्जिया में से होता नहीं जा सका था। क्योंकि जिस रास्ते पर उसको जाना था, उसके एक तरफ तो समुद्र था और दूसरी तरफ बड़े बड़े पहाड़। ऐसे जङ्गल थे, जिनमें घुड़सवार नहीं घुस सकते थे। समुद्र और पहाड़ के बीचवाले १४ मील लम्बे तङ्ग रास्ते पर चाहे कितने भी आयें, कुछ सैनिक ही उनको रोक सकते थे। इसलिए सिकन्दर उस रास्ते नहीं जा सका। कहीं ज्योर्जियावाले उस पर आकर आक्रमण न करें, इसलिए उसने

वहाँ एक बुर्ज और किला बनवाया। उसे फौलादी फाटक भी कहते हैं।

ज्योर्जिया के उत्तर में काला सागर और पूर्व में बाकू समुद्र है। यह बाकू (कास्पियन) समुद्र सचमुच समुद्र नहीं है। यह एक बड़ी झील है। इसकी परिधि २,८०० मील है। इसमें कई ऐसे द्वीप हैं, जिसमें लोग रह सकते हैं। नगर हैं। तातारों ने जब फारस पर हमला किया तो आश्रयार्थी भागकर इन द्वीपों में और ज्योर्जिया के पहाड़ व जङ्गलों में रहने लगे।

बगदाद में ऐसे कारीगर थे, जो मोतियों में छेद किया करते थे। भारत से यहाँ मोती आया करते, और यहाँ से ईसाई देश जाया करते। यहाँ सोने और चान्दी के मूँगों से कपड़े बनाये जाते थे। उस ईलाके में उससे बड़ा कोई नगर नहीं था। वहाँ इस्लाम धर्म ही नहीं, जादू, व अन्य शास्त्रों को सीखने के लिए सब सुविधायें थीं।

खलीफा के पास इतनी धन सम्पति थी, जो उस समय किसी और के पास नहीं थी। १२५८ में एक घटना घटी। १२५८ में हुलुग खान नाम के एक बड़ा तातार ने अपनी सेना के साथ बगदाद पर हमला किया। यह



मोंग खान का छोटा भाई था। वे चार भाई थे। काते को जीतने के बाद उन्होंने सारे विश्व को जीतने की ठानी।

चारों चारों दिशाओं में निकल पड़े। हुलुग दक्षिण की ओर गया। वह दिग्विजय करता करता बगदाद तक आया। बगदाद को सेना के वह से जीतना कठिन समझ कर उसने उसको चालाकी से जीतने का निश्चय किया। उसके साथ हजारों सिपाही तो थे ही, बीस हजार घुड़सवार भी थे। परन्तु उसने खलीफा के मन में यह ख्याल पैदा किया कि उसके पास कम

सेना थी। बगदाद पहुँचने से पहले उसने अपने अधिकाँश सैनिकों को सड़क के दोनों तरफ के पेड़ों पर छुपा कर बगदाद के फाटक पर हमला किया।

यह समझ कि खान के साथ काफ़ी सेना न थी, खलीफा लापरवाही के साथ अपनी सेना लेकर उसका मुकाबला करने निकला। यह देख हुलुग ने यह दिखाया जैसे वह उनको देखकर भागा जा रहा हो। उन्होंने शत्रुओं का पीछा किया, और फँस गये। हुलुग खान की सेना ने उनको घेर लिया और बन्दी बना लिया। बगदाद शहर के साथ खलीफा भी तातारों के वश में आ गया।

एक बुर्ज़ में सोना भरा देखकर हुलुग बड़ा अचरज हुआ। बन्दी खलीफा को अपने पास बुलाकर पूछा-"खलीफा, यह सब सोना तुमने क्यों यों जमा कर रखा है? तुमने इससे क्या करने का निश्चय किया है? क्या तुम नहीं जानते थे कि मैं तुमको लूटने के लिए सेना के साथ आ रहा था? यह सब अपने सैनिकों और योद्धाओं को देकर क्यों नहीं उनसे शहर की रक्षा करने के लिए कहा?"

क्या उत्तर दिया जाये, खलीफा को कुछ न सूझा।

"क्यों कि तुम्हें धन से इतना प्रेम है, इसलिए तुम घन ही खाओ।" कहकर हुलूग ने खलीफा को बुर्ज में बन्द कर दिया। यह भी आज्ञा दी कि उसको खाने के लिए कुछ न दिया जाय। चार दिन खलीफा उस बुर्ज में कैद रहा। फिर वह मर गया। उसके बाद कोई खलीफा नहीं हुआ।

(अभी है)




गलीवर की यात्रायें
मेरा नाम लेम्यूल गलीवर है। बात २७०० वर्ष की है। मैं "एन्टिलोप" नामक ब्रिटिश जहाज़ में यात्रा कर रहा हूँ।


रास्ते में भयङ्कर सूफ़ान आया, हमारा जहाज एक बड़ी बहन से टकराया और चूर-चूर हो गया।


मैं एक कश्ती में कूदा। मेरे साथ पाँच और व्यक्ति थे। पूरी कोशिश करके चप्पू चलाकर किश्ती को हम चट्टान से दूर ले गये।



हमारा जहाज डूब गया और बहुत से लोग भी डूब गये।



आप घण्टे बाद करीब तीन मील की दूरी पर हमें किनारा दिखाई दिया।



हम बहुत थक गये थे। एक बड़ी लहर ने आकर हमारी कश्ती उलटा दी।



मेरे साथ के लोग डूब गये। सौभाग्य से मुझे पकड़ने के लिए पतवार की लकड़ी मिल गई।



थोड़ी देर बाद पैरों के नीचे जमीन मिली। एक मील पानी में चलने के बाद किनारे पहुँचा।



किनारे से आधा मील चला तो, पर कहीं कोई न दिखाई दिया।



बहुत थका था ही। आँखे मूँदने लगीं। मे वहीं घास पर सो गया।
जो उठा तो देखता हूँ कि सवेरा हो गया है। खड़े होने की कोशिश की; किन्तु खड़ा न हो पाया।
चारों ओर कुछ आवाज़ सुनाई दे रही थी। जब आँखें इधर उधर घुमाई तो देखा कि मेरे हाथ और पैर रस्सियों से बाँध दिये गये हैं। मेरे बाल भी खूँटों से बाँध दिये गये थे।
छः अंगुल ऊँचा आदमी तलवार ले मेरे मुँह पर आ रहा था।
हेय !
उसके पीछे और कई भी इसी तरह आ रहे थे। मैं जोर से चिल्लाया।



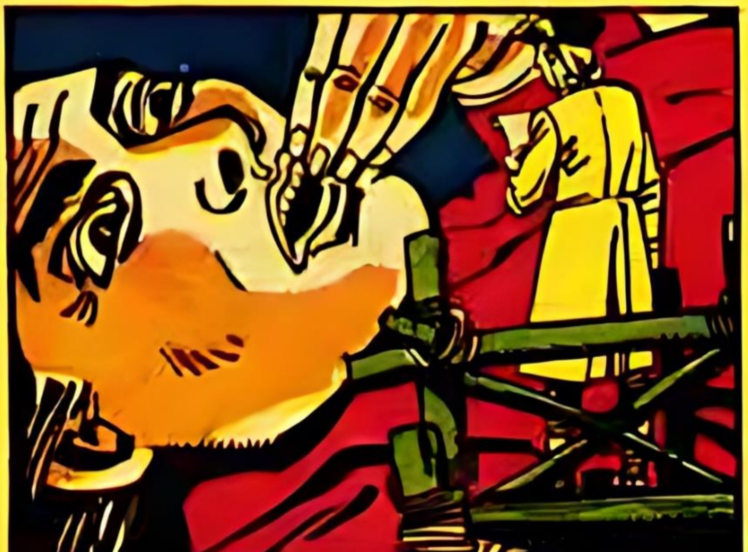
मेने रस्सियों को तोड़ने के लिए करवट लेने की कोशिश की। बाई तरफ की रस्सियों टूट गई। बाई तरफ के बालों के खूँटे भी टूट गये।



"टैल्गो फोनाट" की आवाज सुनाई दी। छोटे छोटे बाण मुख पर लगे।



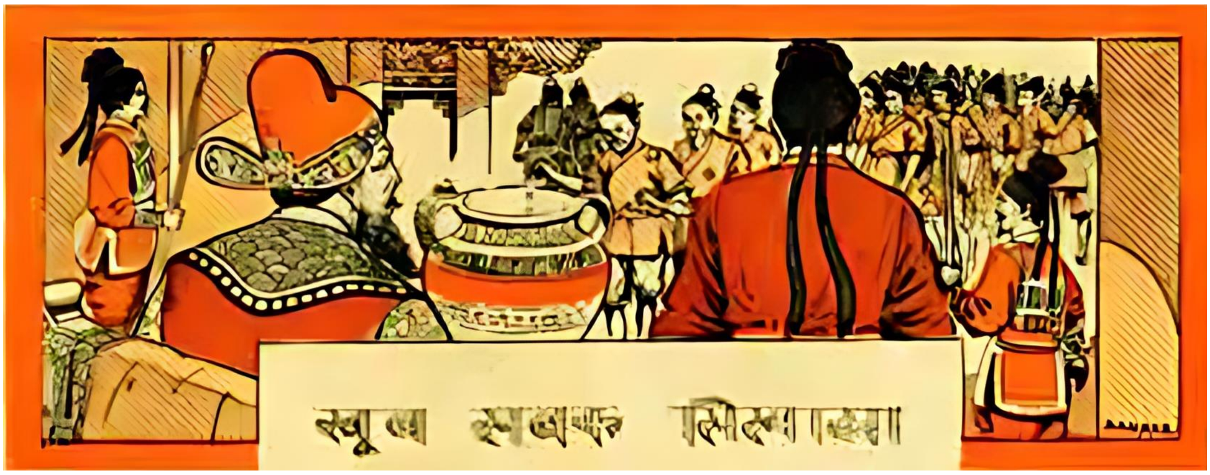
डेढ़ फीट मञ्च पर खड़े होकर एक व्यक्ति ने कोई भाषण किया।



मैंने उससे इशारा किया कि मुझे भूख लग रही है। वह मेरा इशारा समझ गया।



बहुत से छोटे छोटे आदमी खाने पीने की चीजें लेकर मुझ पर चढ़ने लगे।



आठ सौ साल पहले चीन में हङ्ग चौ लूङ्ग साम्राज्य की राजधानी थी। यह महानगर था। यद्यपि यह नगर धन-धान्यों से भरा था, तो भी वहाँ असंख्य भिखारी रहा करते थे। इन भिखारियों का एक राजा भी था। वह भिखारियों की भीख में से एक हिस्सा धन लेता और उस धन से खुद का व्यापार किया करता। इस तरह जो भिखारियों का राजा हो जाता था, उसको बहुत कमाने का भी मौका मिलता।

यद्यपि भिखारियों के राजा के पास बहुत-सा पैसा होता था, तो भी समाज में उसकी कोई गिनती न थी। भले ही वह घर में राजा की तरह रहे, पर घर से बाहर कदम रखते ही उसकी कोई कदर न करता था।

हङ्ग चौ नगर में चिन लाओतो नाम का भिखारियों का राजा था। सात पुश्तों से उसके पूर्वज भिखारियों के राजा रहते आये थे। इसलिए उसके पास कितने ही मकान, कितने ही अनाज के गोदाम, बेहद पैसा, अनगिनत नौकर-चाकर थे। नगर के रईसों में वह भी एक था।

उसने समाज में प्रतिष्ठा पानी चाही। इसलिए उसने भिखारियों के राजा के पद को छोड़ दिया और अपने एक सम्बन्धी को ही वह पद सौंप दिया। फिर भी सब उसको भिखारियों का राजा ही कहकर सम्बोधित करते थे।

उसकी उम्र पचास से अधिक थी। पत्नी बहुत दिन पहले गुज़र चुकी थी। लड़का कोई न था। युनू नाम की एक लड़की थी। वह बहुत सुन्दर थी। पिता

भी उसे अपने प्राणों से अधिक चाहता। उसने उसको अच्छी शिक्षा दिलवाई। सब विद्यायें सिखलाई। वह कविता करती थी। कई वाद्य बजाती थी।

सर्वगुणसम्पन्न युनू के लिए पिता ने अच्छा सम्बन्ध खोजना चाहा। उस जैसी कन्या का बड़े बड़े खानदानों में मिलना भी मुश्किल था। पर चूँकि वह भिखारियों के राजा की लड़की थी, इसलिए बड़े खानदानवाला कोई भी उससे शादी करने के लिए तैयार न था। उसकी उम्र अट्ठारह की हो गई थी। पर उसकी सगाई न हुई थी।

उस नगर में मोची नाम का एक युवक रहा करता था। वह बहुत सुन्दर था पर बेहद गरीब था। उसके माँ-बाप भी न थे। आयु बीस वर्ष की थी। कई सरकारी परीक्षाओं में भी वह उत्तीर्ण हो चुका था। क्योंकि वह बहुत गरीब था, इसलिए उसका अभी तक विवाह न हुआ था। उसके बारे में मालूम करके चिन ने अपनी पुत्री का उसके साथ विवाह करके उसको अपने घर रखने की ठानी। उसका ससुर भिखारियों का राजा



था और वह गरीब था इसलिए वह विवाह के लिए मान गया। उसका कुछ खर्च न हुआ और शादी हो गई।

पत्नी बहुत सुन्दर थी। सम्पन्न और समर्थ भी थी। मोची को ऐसा लगा जैसे स्वर्ग में हो। इस विवाह पर कोई उसका ऐसा मित्र न था, जो खुश न हुआ हो। विवाह के बाद अपने मित्रों को बुलाकर, अपने ससुर के यहाँ उसने दावत दी।

न मालूम उस सम्बन्धी को इस दावत के बारे में कैसे मालूम हुआ। "चिन में क्या बड़ाई है? मैं भी क्या किसी से



छोटा हूँ? मुझे दावत में न बुलाया और औरों को बुलाया?" कहता भिखारियों का राजा पचास साठ आदमियों को साथ लेकर चिन के घर आया।

जब भिखारियों का झुण्ड वहाँ आया तो मोची और उसके मित्र बाहर चले गये। चिन ने भिखारियों से माफी माँगी। "यह दावत हमारे दामाद ने दी है। तुम सबके लिए हम अलग दावत देंगे।" उसने सबको ईनाम देकर भेज दिया।

मोची ने रात किसी दोस्त के घर काट दी। जब अगले दिन सवेरे वह गया, तो चिन अपने दामाद को देख शर्माया। युनू अपमान में घुली-सी जाती थी। परन्तु मोची ने कुछ नहीं कहा।

तब से युनू ने अपने पति की वृद्धि के लिए जो कुछ सम्भव था, वह सब किया। उसने उसके लिए आवश्यक पुस्तकें खरीद कर दीं। पण्डितों को घर बुलाकर उनसे बड़े ग्रन्थ पढ़वाती। मोची उन्नत परीक्षाओं में उत्तीर्ण होकर इन्लिन नामक परिषद में सदस्य हो गया। वह रोज दरबारी पोषाक पहनकर दरवार हो आया करता। गली में लड़के उसे देख चिल्लाया करते। "भिखारियों के राजा का दामाद कर्मचारी हो गया है।"

मोची अपने ससुर के प्रति ऊपर ऊपर से तो आदर दिखाता; पर अन्दर पछताता कि उसकी लड़की से क्यों शादी की थी। अगर पता होता कि इस तरह मेरी वृद्धि होगी तो मैं किसी प्रतिष्ठित घराने में शादी करता। पत्नी को छोड़ने के लिए भी उसके पास जरूरी कारण न थे। वह वह सब सहायता भूल गया, जो उसकी पत्नी ने उसकी तरक्की के लिए की थी।

मोची को वृवेय नाम की जगह में जनसंख्या कर्मचारी का काम मिला। राजधानी से वहाँ नाव में जाना होता था। यह पत्नी को लेकर नाव में निकल पड़ा। कुछ दिनों बाद साईश पहाड़ के पास लङ्गर डाला। उस दिन पूर्णिमा थी। मोची को नींद न आई। वह चान्दनी का आनन्द लेने नाव के ऊपर गया।

वहाँ उसके मन में एक दुर्विचार उठा। युनू अगर मर गई तो मैं दुबारा विवाह कर सकता हूँ। वह यह सोच नीचे गया। युनू सो रही थी। उसे उठाकर चान्दनी दिखाने के बहाने जबर्दस्ती उसको ऊपर ले गया और नाव की छत से उसे नीचे धकेल दिया।

फिर उसने नाविकों को नींद से उठाकर कहा-"जल्दी नाव चलाओ। जितनी जल्दी ले जाओगे, उतना ईनाम दूँगा।" उन्हे न मालूम था कि क्या गुजरा था। उन्होंने लङ्गर उठाया। चप्पू चलाते वे उसको आगे ले गये। जब वे चार मील चले आये और लङ्गर फिर डाल दिया गया तो मोची ने उन लोगों से कहा कि उसकी पत्नी चान्दनी देखती, अचानक नदी में गिर गई थी। वे



असली बात जान गये थे। पर उन्होंने कुछ कहा नहीं।

उधर युनू नदी में गिरकर डूबी न थी। उसके पैरों के नीचे न जाने क्या था कि उसने उसको डूबने न दिया और उसको किनारे भी पहुँचा दिया। वह किनारे पर अकेली बैठकर अपनी दुस्थिति पर रोने-विलखने लगी। वह ताड़ गई कि उसको मारकर उसका पति एक और विवाह करना चाहता था।

सौभाग्य से मोची की कश्ती के जाने के कुछ देर बाद, वहाँ एक और कश्ती ने

आकर लङ्गर डाला। उस कश्ती में यातायात का एक अधिकारी था। उसका नाम झा टे हो था। अपने कमरे में सोने से पहले, उसने और उसकी पत्नी ने चान्दनी देखने के लिए बाहर सिर करके झाँका, तो उनको किसी का रोना सुनाई दिया। उन्होंने नाविकों को भेजकर किनारे पर बैठी रोनेवाली युनू को नाव में बुलवाया। उसका किस्सा सुना। उनको सूखे कपड़े देकर, आश्वासन देकर कहा-"रोओ मत। तुम्हें हम अपनी लड़की की तरह रखेंगे। तुम्हारी किसी न किसी तरह मदद करेंगे। उन्होंने कश्तीवालों से भी कहा कि वे किसी को यह न पता लगने दें।

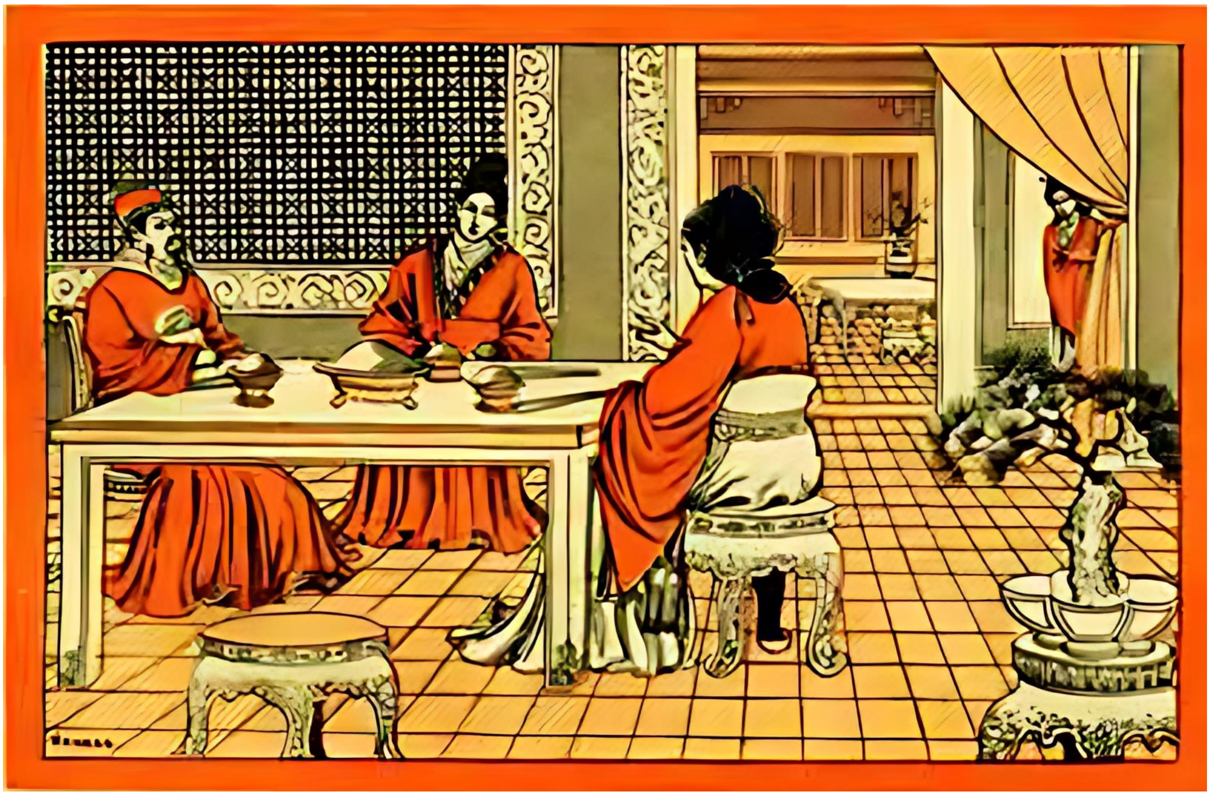
थोड़े दिनों बाद झा उस जगह पहुँच गया, जहाँ वह कर्मचारी था। वृवेय कार्यालय में यह सबसे बड़ा कर्मचारी था। मोची उनके नीचे काम करनेवाला था। यह पता लगते ही कि नये अधिकारी आये हैं, उनके नीचे काम करनेवाले उनको देखने गये। उनमें मोची भी था। उसे देख, झा ने सोचा- "यह तो बहुत खूबसूरत भी है। फिर इसने ऐसा नीच काम किया?"



कुछ महीनों बाद, झा ने अपने मातहत लोगों से कहा-"मेरी एक सयानी लड़की है। शादी करनी है। अगर उसके लायक लड़का मिल जाय, तो मैं उसको अपने घर रखना चाहता हूँ।"

सब जानते थे कि मोची अपनी पत्नी खो बैठा था। इसलिए सब ने उसकी सिफारिश की। झा ने उनसे कहा भी कि वे मालूम करें कि उसका क्या विचार था। जब मोची को मालूम हुआ कि वह एक बड़ा अधिकारी होने जा रहा था, तो उसका मन बल्लियों उछलने लगा। उसने सपने में भी न सोचा था कि भाग्य उसका इतना साथ देगा। यह सुन कि यह मान गया है, झा ने कहा-"लाड़ प्यार करके हमने लड़की को बिगाड़ दिया है। अगर तुम उसके अधिकार में रहना मान लो तभी यह विवाह करना ठीक है। असली बात मैंने पहले ही कह दी है।" मोची मान गया कि जो उसकी पत्नी कहेगी वही वह करेगा।

जब युनू को मालूम हुआ कि झा उसकी दुबारा शादी करने जा रहा था, तो वह बिल्कुल न मानी। "वे मेरे साथ रहने का अपमान न सह करके ही मुझ से



छुटकारा पाना चाहते थे। उनको छोड़कर किसी और से शादी करना मेरे लिए उचित नहीं है।" युनू ने कहा। पर जब उसे पता लगा कि वह अपने पति से ही फिर शादी करने जा रही थी, तो वह मान गई। उसने अपने आँसू पोछे। गहने पहनकर, दुल्हन की पोषाक पहनी।

मोची दूल्हे की पोषाक पहनकर घोड़े पर सवार हो, ससुर के घर आया। ससुर ने वह सब सत्कार किया जो दामाद के लिए किया जाता है। अतिथियों के चले जाने के बाद दूल्हे को दुल्हन के कमरे में ले जाया गया।

वह अभी कमरे में पैर रख रहा था कि किवाड़ के पीछे से आठ नौ दासियों ने उसे डण्डे से खूब मारा।

"ससुर जी, सास जी, मेरी रक्षा करो।" वह जोर से चिल्लाया।

"मारो मत मारो मत, उनको इधर ले आओ।" दुल्हन का कहना उसे सुनाई दिया।

उसने दुल्हन के पास आकर पूछा- "मैंने ऐसा कौन-सा पाप किया है मुझे यह सजा क्यों दी जा रही है?" पर जब उसने मुख पर से परदा हटाया तो उसे काठ मार गया।" भूत भूत वह चिल्लाया। वह काँपने लगा।

नौकरानियाँ जोर से हँसी। झा और उसकी पत्नी हो हल्ला सुनकर वहाँ आये और उसको सब कुछ बताया। युनू लगातार रोती जाती थी। मोची को न सूझा कि कैसे उसको आश्वासन दे। उसने उसके पैर पकड़ लिए।

झा पति-पत्नियों ने युनू को समझाकर कहा-"उसे माफ कर दो। वह अपने किये पर पछता रहा है।" इस तरह पति पत्नी का पुनर्मिलन हुआ। उन्होंने उसके बाद मिल जुलकर गृहस्थी निभाई।



CHANDAMAMA (Hindi) MAY 1960 Regd. No. M. 5452



मार्कोपोलो की साहसिक यात्रायें